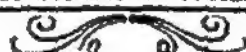


मुद्रक और प्रकाशक—श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ

जैनसिद्धान्तप्रकाशक (पवित्र) प्रेस

नं० ८ विश्वकोष लेन, बाघबाजार—कलकत्ता



पाठ और विषयोंकी सूची।



सूचना।

विदित हो कि जैनबालबोधकका दूसरा भाग सन् १९०८ में छपा था, परंतु उसमें अनेक पाठ तीसरे चौथे भागके आ जानेसे वे पाठ उठाकर अब यह दूसरा भाग जहांतक मुझसे बना सरलताके साथ जैनधर्मसंबंधी विशेष शिक्षा देनेकेलिये बनाकर प्रकाशित किया है। इसके पाठोंकी सूची देखने या आद्योपांत पढ़नेसे आपको मालूम होगा कि इसके प्रत्येक पाठमें जैनधर्मकी शिक्षा व साधारण नीतिज्ञान यथाशक्ति भरा गया है।

इस पुस्तकमें एक विशेषता यह भी है कि अनेक पाठशालाओंमें स्वास्थ्य व धर्मसंबंधी आचारविचार आदिकी पुस्तकें जुदी पढ़ानी पड़ती हैं सो वे विषय भी इसमें सरलताके साथ प्रश्नोत्तररूपमें लगा दिये गये हैं इसलिये जुदी कोई पुस्तक पढ़ानेकी आवश्यकता नहिं रहेगी, इसी एक पुस्तकके पढ़ानेसे तथा इसके आगेके भाग पढ़ानेसे जैनीबालकोंके हृदयमें जैनधर्मकी शिक्षा ऐसी जम जायगी कि वह फिर चाहे जितना अंगरेजी व अन्य पुस्तकें क्यों न पढ़े, जैन धर्मकी वासनासे रहित नहिं होंगे। इसके सिवाय जैनपाठशालाओंमें प्रायः हिन्दी भाषाका व्याकरण प्राय नहिं पढ़ाया जाता, इसीलिये इन भागोंमें व्याकरण विषयक पाठ भी साथ २ देना प्रारंभ कर दिया है। इसलिये ये सब ही भाग आवश्यकीय समस्त विषयोंको शिक्षा देनेवाले समस्त जैनपाठशालाओंमें हमेशह पढ़ाने लायक हो जायेंगे अत एव जैनपाठशालाओंके अधिकारी महाशयोंको चाहिये कि— समस्त पाठशालाओंमें इसका ही प्रवेश कराके बालकोंको जैन धर्मकी शिक्षासे शिक्षित करें।

कलकत्ता २५।२।१७] —पन्नालाल बाकलीवाल।



श्रीपरमात्मने नमः ।

जैनबालबोधक

द्वितीय भाग ।

—०—

दोहा ।

अष्टादश दूषण रहित, गुण अनन्त भगवन्त ।
सब जनहित उपदेश कर, नमहुं देव अरहन्त ॥ १ ॥
परिग्रह आरम्भतें विरत, विषयवासनातीत ।
ज्ञान ध्यान तपमें मगन, नमो सुगुरु करि प्रीत ॥ २ ॥
अनेकान्त विज्ञानयुत, वस्तुप्रकाशन भान ।
भव जीवन हितकर सदा, वन्दौं श्रीजिनवान ॥ ३ ॥
जिनके वचन प्रसादतें, प्रगट रहा वृषभान ।
मन वच तन कर नमत हूं, वर्धमान भगवान ॥ ४ ॥
इह विधि इष्ट प्रणाम करि, जिनवाणी उरधारि ।
जैनबालबोधक द्वितिय, लिखूं बालहितकारि ॥ ५ ॥

पहिला पाठ ।

गुरुशिष्य प्रश्नोत्तर (सम्यग्दर्शन)

शिष्य—गुरुजी ! आज हम सम्यग्दर्शनके विषयमें कुछ प्रश्न करना है । आपकी आज्ञा हो तो किया जाय ।

गुरु–भाई हमने कई बार कह दिया है कि जो बात समझमें नहीं आवै वा विशेष कुछ जानना हो हमेशह पूछ लिया करो। प्रश्न करनेमें कदापि शर्म न किया करो।

शिष्य—गुरुजी आपने तो हमें उस दिन सच्चे देव गुरु शास्त्रके श्रद्धान करनेको सम्यग्दर्शन बताया था परन्तु भादोंकी पूजामें हमारे यहांके बूढे पंडितजीने तत्त्वार्थसूत्रका अर्थ वांचा था। उसमें उन्होंने सम्यग्दर्शनका स्वरूप और ही कुछ कहा था।

गुरु—उन्होंने क्या कहा था?

शिष्य–उन्होंने कहा था कि जीव अजीव आस्रव बंध संवर निर्जरा और मोक्ष इन सात तत्त्वोंका श्रद्धान (विश्वास) करना सो सम्यग्दर्शन है। सो गुरुजी सम्यग्दर्शन दो प्रकारका होता है?

गुरु–तुम उसवक्त पंडितजीसे पूछते तो वे बता सकते थे। खैर अब समझ लो कि–सत्यार्थ देव गुरु शास्त्रका श्रद्धान करना और सात तत्त्वोंका श्रद्धान करना एक ही बात है। देखो देव गुरु और शास्त्रके उपदेशसे सातों तत्त्वोंका स्वरूप मालूम होता है इसलिये देव गुरु शास्त्रका श्रद्धान करनेसे तो सातों तत्त्वोंका ज्ञान होता है और सातों तत्त्वोंका यथार्थ ज्ञान करनेके लिये देव गुरु वा शास्त्रका आश्रय लेनेसे देव गुरु शास्त्रका लाभ होगा इसलिये एकका श्रद्धान करनेसे दूसरेका श्रद्धान अपने आप हो जाता है।

शिष्य—गुरुजी! देव गुरु शास्त्रका श्रद्धान करनेसे सातों तत्त्वोंका श्रद्धान कैसे अपने आप होजायगा तथा सात तत्त्वोंका

श्रद्धान करेगा उसको देव गुरु शास्त्रकी श्रद्धा कैसे अपने आप हो जायगी ?

गुरु—भाई ! शास्त्रोंमें ही तो सातों तत्त्व बताये हैं इसलिये शास्त्रमें श्रद्धान करेगा तो सात तत्त्व आजायगे। इसीप्रकार सात तत्त्वोंका स्वरूप समझकर श्रद्धान कर लेगा तो शास्त्रजी आजायगे। शास्त्रजी सत्यार्थ देवक या गुरुके कहे हुये हैं, सो जिनके वचनोंमें श्रद्धान होगा तो उन वचनोंके कहनवाले सत्यार्थ देव तथा गुरुमें भी श्रद्धान होगा क्योंकि शास्त्रोंमें ही सत्यार्थदेव गुरुका स्वरूप वर्णनकिया हुआ है, इसलिये देव शास्त्र गुरुका श्रद्धान करना वा सात तत्त्वोंका श्रद्धान करना एक ही बात है। सात तत्त्वोंका स्वरूप तुम सरीखे बच्चोंके समझ में आ जाना कठिन है इसलिये हमारे आचार्योंने सम्यग्दर्शनका स्वरूप सीधा बतलानेके लिये देव गुरु शास्त्रका श्रद्धान करनेको कह दिया है सो तुम्हें इनमेंसे सम्यग्दर्शनका स्वरूप जो सोधा व अच्छा मालूम हो, वही समझकर चाहे तो सात तत्त्वोंका श्रद्धान कर लो, चाहे सच्चे देव गुरु शास्त्र पर श्रद्धान कर लो दोनों एक ही बात है।

दूसरा पाठ।

अविनयी बालक।

कुंवरलाल नामक एक अविनयी बालक था। वह किसीकी भी विनय नहीं करता था और न देव शास्त्र गुरु माता पिता वगरहको हाथ जोडकर नमस्कारादिक करता था। उसके पिताने पढानेवाले पण्डितजीसे कहा कि—"महाराज ! और कुछ चाहे

यह न पढ़ परन्तु इस लड़के में विनयगुण सर्वथा नहीं है सो इसे बड़ोंका विनय करना अवश्य सिखा दज।' पण्डितजीने बहुत कुछ प्रयत्न किया परन्तु, कुमरलालमें विनय गुण नहीं आया।

पण्डितजीके पड़ोसमें एक बनियेका घर था। उसके घरमें अचानक ही एक छप्पर गिर पड़ा। वह बनिया दौड़कर पंडितजीके घर आ पण्डितजीसे प्रार्थना करने लगा कि—मेरा छप्पर गिर गया है, आपके यहां कोई लकड़ीका थंभा हो तो कृपाकर दीजिये। पण्डितजीने अपने चेलोंमेंसे कुमरलालको उंगलीसे बताकर कहा कि—तुम इस लड़केको लेजाओ। यह लड़का विनयरहित लकड़के समान जड़ है, इसीको थंभे की जगह खड़ा करके इसके माथेपर छप्पर रख दो। तब कुमरलाल घबड़ाकर उस बनियेसे बोला कि—नहीं, नहीं! मुझे माफ करो। मुझसे छप्परका बोझ नहीं उठाया जायगा। पण्डितजीने कहा कि—तुझे अवश्य ही थंभा बननेके लिये जाना पड़ेगा क्योंकि तू विनयरहित थंभ सरीखा है। कुमरलालने हाथ जोड़कर कहा कि—मुझे हरगिज न भेजिये, मैं आजसे विनयी बनूंगा। आप मुझे बताइये कि विनय किसे कहते हैं और किन किनकी विनय करनी चाहिये। तब पंडितजीने कहा कि—देव गुरु (साधु) शास्त्रजी मंदिरजी ये सब पूजनीय द्रव्य हैं। इनको देखते ही हाथ जोड़ मस्तक नमाकर नमस्कार (प्रणाम) करना चाहिये, इसीप्रकार गुण बुद्धि उमर सबमें वगैरहमें अध्यापक, पंडित, माता, पिता, चाचा, मामा, बड़ा भाई वगैरह जो अपनेसे बड़े हैं, इन सबको भी हाथ जोड़कर प्रणाम करना चाहिये। इनकी जैसी आज्ञा हो

वैसा ही वर्तना चाहिये। पीठ देकर बैठना, इनका आदर सत्कार न करना कहना, न मानना, सो ही अविनय है। अतएव आजसे ऐसा कदापि न करके सबकी यथायोग्य विनय करनी चाहिये। जिस पुस्तकसे तुम पढते हो तथा स्लेट पन्सिल दावात कलम वगैरह जिन जिन पदार्थो से विद्यामें सहायता मिलती है, उनको भी पावोंमें नहिं डालना, उनके पाव नहिं लगाना। यह बात सुनकर कुमारलालने बडे नम्रभावसे पण्डितजीको हाथ जोडकर प्रणाम किया और कहा कि-मैं आजसे कभी किसीकी अविनय नहीं करूंगा। आज तक जो मेरा अपराध हुआ सो क्षमा कर।

तीसरा पाठ।

देवस्तुति।

प्रभु पतितपावन मैं अपावन, चरन आयो सरनजी।
यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरनजी॥
तुम ना पिछान्या आन मान्या, देव विविध प्रकारजी।
या बुद्धिसेती निज न जाण्या, भ्रम गिण्या हितकारजी॥
भव—विकटवनमें करम बरी, ज्ञानधन मेरो मरयो।
तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिर्यो॥
धन घडी यों धन दिवस यो ही, धन जनम मेरो भयो।
अब भाग मेरो उदय आया, दरश प्रभुको लख लयो॥
छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासापै धरैं।
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुणयुत, कोटि रवि छविको हरैं॥
मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरा, उदय रवि आतम भयो।
मो उर हरख ऐसो भया, मनु रङ्क चिन्तामणि लयो॥

मैं हाथ जोड नवाय मस्तक, वीनऊं तुम चरनजी ।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारन तरनजी ॥
जांचूं नहीं सुरवास पुनि, नरराज परिजन साथजी ।
'बुध' जाचहूं तुव भक्ति भव भव, दीजिये शिवनाथजी ॥

दूसरी स्तुति ।

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्द रसलीन ।
सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरि रज रहस विहीन ।

पद्धरी छन्द ।

जय वीतराग विज्ञानपूर, जय मोहतिमिरको हरन सूर ।
जय ज्ञान अनन्तानन्तधार, दृगसुख वीरजमंडित अपार ॥
जय परमशांतिमुद्रासमेत, भविजनको निज अनुभूतिहेत ।
भवि भागनवश जोगेवशाय, तुम धुनि ह्वै सुनि विभ्रम नशाय ॥
तुमगुण चिंतत निजपरविवेक, प्रगटै विघटैं आपद अनेक ।
तुम जगभूषण दूषणवियुक्त, सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥
अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप, परमात्म परम पावन अनूप ।
शुभ अशुभ विभाव अभावकीन, स्वाभाविक परिणतिमय अछीन ॥
अष्टादशदोषविमुक्त धीर, सचतुष्टयमय राजत गंभीर ।
मुनि गणधरादि सेवत महंत, नवकेवललब्धि रमा धरंत ॥
तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जाहिं जैहैं सदीव ।
भवसागरमें दुख छार वारि, तारनको और न आप टारि ॥
यह लखि निजदुखगद हरणकाज, तुमही निमित्त कारण इलाज
जाने, तातैं मैं शरण आय, उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥
मैं भ्रम्यो अपनपो विसरि आप, अपनाये विधिफल पुण्यपाप ।
निजको परको करता पिछान, परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥

आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि।
तनपरणतिमें आपो चितार, कबहू न अनुभयो स्वपदसार॥
तुमको विन जाने जो कलेश, पाये सो तुम जानत जिनेश।
पशु नारक नर सुर गति मझार, भव धर धर मरयो अनंतवार॥
अब काललब्धिबलतें दयाल, तुम दर्शन पाय भयो खुशाल।
मन शांत भयो मिटि सकलद्वन्द, चाख्यो स्वातमरस दुखनिकंद॥
तातें अब ऐसी करहु नाथ, बिछुरै न कभी तुअ चरण साथ।
तुम गुणगणको नहिं छेव देव, जग तारनको तुअ विरद एव॥
आतमके अहित विषय कषाय, इनमें मेरी परिणति न जाय।
मैं रहूं आपमें आप लीन। सो करो होउं ज्यों निजाधीन॥
मेरे न चाह कछु और ईश, रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश।
मुझ कारजके कारन सु आप, शिव करहु हरहु मम मोह ताप॥
शशि शांतकरन तपहरनहेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत।
पीवत पियूष ज्यों रोग जाय, त्यों तुम अनुभवतें भव नसाय॥
त्रिभुवन तिहुं काल मझार कोय, नहिं तुम विन निजसुखदाय होय
मो उर यह निश्चय भयो आज, दुखजलधि उतारन तुम जिहाज॥

दोहा।

तुम गुणगणमणि, गणपती गणत न पावहिं पार।
'दौल', स्वल्पमति किमि कहै, नमूं त्रियोग संभार॥

चौथा पाठ।

दर्शन पूजा आरती विनय।

विद्यार्थियोंको सवेरे ही उठकर प्रथम सात वार नमस्कार-मन्त्रका जाप्य करना चाहिये। उसके पश्चात् लघुशङ्काकी बाधा-

हो तो उसे बिछाकर हाथ पैर धो पद्मासनसे सीधे बैठकर नमस्कार-मन्त्र असियाउसा, अरहंत सिद्ध इत्यादि मन्त्रोंमेंसे किसी एक मन्त्रकी माला जपना चाहिये अथवा सामायिकपाठ पढ़कर सामायिक करना चाहिये। फिर हो सके तो प्रातः पाठ करके दिशामैदान जाकर दतौन करके गरम जल या साफ जलसे स्नान करके मन्दिरजीमें जाकर दर्शनपाठमें बताये हुये नियमसे दर्शन पूजा* करना चाहिये। दर्शन करके दर्शनपाठकी अथवा ऊपर लिखी हुई स्तुति भगवानके सामने खड़े होकर पाठ करके साष्टांग नमस्कार करना चाहिये। शास्त्रजीके सामने छठे पाठमें लिखी हुई स्तुति या अन्य स्तुति पाठ करके साष्टांग नमस्कार करना चाहिये। तत्पश्चात् पाठशालामें जाकर गुरुजीकी आज्ञानुसार पाठ पढ़ना चाहिए। इसीप्रकार सामको भी मंदिरजीमें जाकर उक्त प्रकारसेही दर्शन पूजा करना चाहिए। दर्शनके पश्चात् भगवानकी आरती होती हो तो आरती बुलवाना चाहिए तथा स्वयं आरती करके दीप धूप चढ़ाकर नमस्कार करना चाहिए। इसीप्रकार प्रतिदिन करते रहना चाहिए। इसके सिवाय पाठशाला या बाजार जाते समय रास्तेमें मंदिर जी आजाय अथवा दूरसे मंदिरजीका शिखर दीख पड़े तो उसी वक्त जूते उतारकर हाथ जोड़कर मस्तक नवाय कर विनय करना चाहिए क्योंकि मंदिरजी

* भगवानके सामने दर्शन करते समय चावल पुष्प, लौंग, बादाम वगैरह चढ़ा दिया यह पूजा होगई। विद्यार्थियोंको छुट्टीके दिन जहांतक बने अष्टद्रव्यसे पूजा करना तथा पूजा पढ़ाना

भी नव देवताओंमेंसे* एक देवता है। इसप्रकार नित्यदर्शन पूजा आरती विनय करते रहनेसे हृदय पवित्र होता है, पुण्य होता है, पुण्यके प्रभावसे सुख यश और विद्याकी प्राप्ति होती है इसकारण प्रत्येक विद्यार्थीको इसप्रकार हमेशह करते रहना चाहिये।

पांचवां पाठ।

उदारता

हरएक जैनी बालकको अपने चित्तमें ओछापन व कृपणता न रखकर हमेशह उदारता (चित्तको बडा) रखना चाहिये क्योंकि उदारताके समान दूसरा कोई गुण उत्तम नहीं है। इस दुनियामें जो जो पुरुष उदार हो गये हैं, उन सबका यश (कीर्ति) अभीतक गाया जाता है। प्यारेलाल नामका एक लडका जयपुरमें रहता था। उसको उदारभावके कारण बडी जैनपाठशालामें बडा भारी मान व इनाम मिला था।

जयपुरमें मानमल नामक एक जैनी था। उसके प्यारेलाल नामका ८ वर्षका एक सुशील लडका था बालकपनसे ही प्यारेलालमें उत्तम उत्तम गुण होगये थे। परन्तु उदारता गुण सबसे अधिक था। किसीका भला होता हो तो उस कार्यमें प्यारेलाल हमेशह आगे होकर सहायता करता था। इतना ही नहीं किन्तु किसी दूसरेकी भलाई करनेमें अपनी हानि हो तो भी वह अपनी हानिकी कुछ भी परवाह नहि करके दूसरेकी भलाई करनेमें तत्पर रहता था।

* जिनमंदिर, जिनप्रतिमा, जिनवाणी (जैनशास्त्र) जिनधर्म, अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु ये नव देवता हैं।

एक दिन उसके घरपर पानमलका अतिस्नेही मित्र पाहुना आया था। उसने और लोगोंसे प्यारेलालकी बहुत कुछ प्रशंसा सुन रक्खी थी। उसके साथ २ यह भी सुना था कि प्यारेलाल में उदारता गुण सबमें अधिक है। इस कारण उस पाहुनेने प्यारेलालके उदारतागुणकी परीक्षा लेनेका विचार करके प्यारेलालसे कहा कि प्यारेलाल! तुम क्या पढते हो?

प्यारेलाल—काकाजी! मैं जैनबालबोधक पहिला भाग पढता हूं।

पाहुना—तेरी कलास (क्लासमें) कितने विद्यार्थी हैं?

प्यारेलाल—मेरी क्लासमें पचीस लडके पढते हैं।

पाहुना—उन सब लडकोंमें अच्छे लडके कितने और खराब कितने है।

प्यारेलाल—काकाजी! इस प्रश्नका उत्तर मैं किसी प्रकार नहीं दे सकता।

पाहुना—अच्छा प्यारेलाल! आज मैं तुझे २५ पुस्तक देता हूं सो तू अपनी क्लासके सब लडकोंको एक एक पुस्तक दे देना परन्तु इनमें एक पुस्तक कुछ फटी हुई तथा मैली है सो क्लासमें जो लडका सबसे आखीरमें रहता है उस लडकेको दे देना।

प्यारेलाल—जो आज्ञा।

इसके पश्चात् प्यारेलाल पाठशालामें २५ पुस्तकें लेकर गया और उस पाहुनेकी सब बात गुरुजीको ज्योंकी त्यों कह सुनाई। तब अध्यापकने प्रार्थना की कि ये पुस्तकें तू लाया है सो तू ही अपने हाथसे विद्यार्थियोंको बांट दे। तब गुरुकी आज्ञानुसार उसने ही सब विद्यार्थियोंको एक एक पुस्तक बांटदी परन्तु

जो पुस्तक मैली और फटी हुई थी, वह अपनेलिये रक्खी । यह देख अध्यापकजीने कहा कि प्यारेलाल तूने खराब पुस्तक क्यों रक्खी, तू तो सबसे प्रथम रहता है । प्यारेलालने कहा कि- दूसरेको खराब पुस्तक देकर अपने आप अच्छी रखना यह अन्याय कहा जायगा क्योंकि दूसरेको ऐसी खराब पुस्तक देनेमे उसके मनमें दुःख होगा इस कारण खराब पुस्तक अपने आप लेना ही उचित समझकर मैं ने यह पुस्तक अपने लिये रक्खी है। यह बात सुनकर अध्यापक महाशय बड़े प्रसन्न हुये । सब लड़कोंके सामने अध्यापकजीने प्यारेलालके इस उदारभावकी बहुत प्रशंसा करके सबको प्यारेलालकी तरह उदारता गुण धारण करनेको प्रेरणा की। जब यह बात प्यारेलालके घर पाहुनेने सुनी तो उसने खुश होकर प्यारेलालकी बहुतसी प्रशंसा करके प्यारेलालको पांच पुस्तकें इनाम दीं ।

छठा पाठ ।

जिनवाणी माताकी स्तुति ।

सवैया मत्तगयंद ।

वीरहिमाचलतैं निकसी, गुरु गौतमके मुखकुंड ढरी है ।
मोहमहाचल भेद चली, जगकी जड़तातप दूर करी है ॥
ज्ञानपयोनिधिमांहि रली, बहु भंग तरंगनिसों उछरी है ।
ता शुचि शारदगंगनदीप्रति, मैं अंजुलि करि शीस धरी है ॥१॥
या जग मन्दिरमें अनिवार, अज्ञान अन्धेर छयो अति भारी ।
श्रीजिनकी धुनि दीप शिखासम, जो नहिं होत प्रकाशनहारी ॥
तो किस भांति पदारथपांति, कहां लहते ? रहते अविचारी ।

या विधि संत कहैं धनि हैं धनि हैं जिनवचन बड़े उपकारी॥७॥

दोहा।

जिनवानीके ज्ञानतैं सूझहि लोक अलोक।
सो वानी मस्तक धरो, सदा देत हूं धोक॥१॥

मंदिरजीमें कहीं भी शास्त्रजी धरन हों अथवा जहां जिस आलमारी वा खिड़कीमें शास्त्रजी विराजमान हों, उनके सामने ऊपर लिखी स्तुति बोलकर हाथ जोड़कर नमस्कार करना चाहिये।

सातवा पाठ।

नीरोगता।

नीरोगता (तंदुरुस्ती) समस्त सुखोंका मूल (जड़) है। नीरोगताके समान संसारमें सुखका साधन और कोई नहीं है। क्योंकि शरीर निरोग रहनेसे ही मनुष्य संसारके समस्त सुखोंके लिये नानाप्रकारके उद्योग वा उपाय कर सकता है। रोगी मनुष्य ऐसा दुखी और उदास रहता है कि उसे धर्म वगैरह किसी भी कामके करनेमें उत्साह नहीं होता। अतएव मनुष्यको रोगोंसे सदा दूरही रहना चाहिये। अर्थात् अपना खान पान रहन सहन ऐसा रखना चाहिये जिससे कोई भी रोग उत्पन्न न हो। क्योंकि जब किसीको कोई रोग होता है तो वह उसीके खानपान व रहन सहन बिगड़नेसे ही होता है। यदि मनुष्य अपना खान पान और रहन सहन ठीक रक्खे तो कभी भी रोगोंके फंदेमें न फसें। यहां कुछ ऐसे उपाय बताये जाते हैं कि जिनके अनुसार बरताव करते रहनेसे मनुष्य रोगोंसे बचकर नीरोगताको प्राप्त कर सकता है।

नीरोगता प्राप्त करनेकेलिये प्रथम तो स्नान करनेकी बड़ी आवश्यकता है। स्नान करनेसे शरीरका मैल धुल जाता है और मैला रहनेके कारण शरीरमेंसे जो दुर्गंध निकला करती है, वह नष्ट हो जाती है। जो लोग नित्य स्नान करते हैं उनका शरीर निर्मल और नीरोग रहता है। जो लोग कई कई दिन तक स्नान नहीं करते उनके शरीरमें दुर्गंध आने लगती है और उनको खुलकर भूख नहि लगती तथा दस्त भी साफ नहि आता जिससे वे रोगी हो जाते हैं।

दूसरे—प्रतिदिन थोड़ा बहुत व्यायाम (कसरत) करना भी आवश्यकीय कार्य है क्योंकि व्यायाम करनेसे शरीर हृष्टपुष्ट और निरोग रहता है। दस्त खुलासा आता है। इसलिये दंड पेलना मुद्गर फिराना, घोड़ेपर चढ़कर दौड़ाना, गेंद फुटबाल खेलना आदि जिसप्रकार शरीरकी हलनचलन क्रिया हो, ऐसा व्यायाम नित्य करते रहना इसके सिवाय प्रात काल और सायंकाल खुले मैदानमें भ्रमण करना भी एक प्रकारका व्यायाम है। जो लोग थोड़ा बहुत भी व्यायाम नहीं करते यों ही घरपर सुस्त पड़े रहते हैं उनका शरीर निर्बल हो जाता है और शीघ्र ही रोगी हो जाते हैं।

तीसरे-शरीर निरोग रखनेकेलिये भोजनकी शुद्धि रखना चाहिये, सड़ा गला, या सूखा भोजन करना शरीरको बड़ा हानिकारक है। दूसरे खाते समय जल्दी २ नहीं खाना चाहिये। जल्दी भोजन करनेसे भोजन बड़ी देरमें पचता है, अजीर्ण हो जाता है। भोजन पचे बिना ही भोजन करनेका दूसरा समय आजाता है तो अजीर्णपर फिर भोजनकर लेना पड़ता है जिससे—

पेटमें पीडा अपचाक दस्त वगरह अनेक दुखदाई रोग हो जात है। पानी भी निर्मल दोहरे गाढ़े छन्नेसे छानकर पीना चाहिये।

चौथे—नीरोग रहनेकेलिये रहनेका स्थान ऐसा होना चाहिये जिसमें शुद्ध वायु और प्रकाश अच्छी तरह आता जाता हो। जिस स्थान वा कमरेमें सदा अंधेरा रहता है और वायु तथा सूर्यकी किरणें नहीं आतीं, दीवारें तथा आगन सीला रहता है उस स्थानको रोगका घर समझना चाहिये। उस स्थानमें रहनेसे शरीरका स्वास्थ्य बहुत जल्दी बिगड जाता है। बहुत जल्दी रोगी हो जाते हैं।

हे बालको ! यदि तुम निरोग रहकर सुखी रहना चाहते हो तो ऊपर लिखे उपायोंके अनुसार अपना वर्ताव करो। खाने पीनेकी वस्तुयें भी बहुतसी हानिकारक होती हैं सो तुम्हारे माता पिता जिस २ चीजके खानेकेलिये तथा अधिक खानेकेलिये मनाई करें उसको कदापि मत खाया करो।

आठवा पाठ।

श्रावकके बारह व्रतोंके नाम।

पांच अणुव्रत तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत इसप्रकार श्रावकके बारह व्रत कहे गये हैं।

जिनमेंसे हिंसादिक पांच पाप एकदेश (यथाशक्ति) त्याग किये जांय, उनको अणुव्रत कहते हैं। जैसे—अहिंसाणुव्रत १, सत्याणुव्रत २, अचौर्याणुव्रत ३ ब्रह्मचर्याणुव्रत ४, परिग्रहपरिमाणाणुव्रत ५ इसप्रकार पांच अणुव्रत हैं।

जिनव्रतोंसे श्रावकके आठ मूलगुण वृद्धिको प्राप्त हों उन्हें गुणव्रत कहते हैं। दिग्व्रत १, अनर्थदण्डव्रत २, और भोगोपभोग परिमाणव्रत ३, ये तीन गुणव्रत कहलाते हैं।

जिन व्रतोंमें मुनिके पंच महाव्रत वगैरहकी शिक्षा मिलती रहै उनको शिक्षाव्रत कहते हैं, ये शिक्षाव्रत चार हैं देशावकाशिक १ सामायिक २, प्रषधोपवास ३, और अतिथिसंविभाग (दान) ४।

बारहव्रतोंके पांच पांच अतीचार हैं। उन अतीचारोंको टालकर इन बारहव्रतोंको धारण करनेसे वास्तविक श्रावक हो-सकता है। उसको श्रावककी ग्यारह प्रतिमाओंमेंसे दूसरी प्रतिमाका धारी व्रती श्रावक कहते हैं अर्थात् वह श्रावकके ग्यारह दरजोंमेंसे दूसरे दर्जेका श्रावक कहलाता है।

जो लोग बारहव्रतोंको अतीचाररहित नहीं पालते, कमसे कम पांच अणुव्रतोंमेंसे जिनके एक भी अणुव्रत नहिं है अर्थात् हिंसा, चोरी, झूठ, कुशील और परिग्रहमेंसे एक भी पाप जिसने एकदेश नहिं छोडा है वह श्रावक नहिं कहला सकता और जो मनुष्य कमसेकम पांच अणुव्रतोंको निरतिचार पालता है वह अंगरेज सरकारके ताजीरातहिंद (इण्डियन पिनलकोड) के लिखे हुये ५४० प्रकारके अपराधोंमेंसे किसी भी अपराधमें नहिं आसकता क्योंकि ये ५४० अपराध इन हिंसादि पांच पापोंके ही भेद हैं और इन्हींके कारण मनुष्य उन अपराधोंको करते हैं।

इन बारह व्रतोंके वा कमसे कम पांच अणुव्रतोंके धारण करनेवाले इस लोकमें कीर्ति सुख प्रतिष्ठाको प्राप्त होकर परलोकमें अनंत सुखी होते हैं। इस कारण जैनीमात्रको बालकपनसे ही इन पांच पापोंके त्याग करनेका अभ्यास बढाना चाहिए और

पांच पापोंका त्याग करनेके पश्चात् तीन गुणव्रत तथा चार शिक्षा व्रतोंको धारण करके सच्चा श्रावक बनकर जैनधर्म की महिमा (प्रभावना) बढ़ाना चाहिये।

नवमा पाठ।

लकडहारा और उसका कुहाडा।

एक लकडहारा नदीके किनारेपर कुहाडेसे लकडियें काटता था। दैवयोगसे हाथमेंसे कुहाडा निकलकर उस नदीमें गिर पड़ा। नदीमें पानी बहुत था जिससे वह नदीमेंसे अपना कुहाडा निकालनेमें असमर्थ था। लाचार वह गरीब लकडहारा नदीके किनारेपर बैठकर रोने लगा। इतनेहीमें उस जगहका क्षेत्रपाल देव मनुष्य रूपमें वहां आया तो उसने लकडहारेपर दया करके नदीमेंसे उसका कुहाड़ा निकालनेके लिए डुबकी लगाई और लकडहारे की परीक्षाके लिये एक सोनेका कुहाडा दिखाकर वह देव बोला कि—"तेरा यही कुहाडा है" तब लकडहारेने देखकर कहा कि नहिं मेरा यह कुहाडा नहीं है। तब देवने दूसरीवार डुबकी लगाकर एक चांदीका कुहाडा लाकर कहा कि- "तुम्हारा यह कुहाडा है" तब लकडहारेने कहा कि यह कुहाडा भी मेरा नहीं है। तब तीसरी बार देवने जलमें डुबकी लगाकर लोहेका असली कुहाडा लाकर कहा कि लो तेरा यह कुहाडा है? तब लकडहारेने प्रसन्न होकर कहा कि—हां मेरा कुहाडा यही है। इसप्रकार उस लकडहारेकी निर्लोभता और सचाईको देखकर वह देव बहुत ही प्रसन्न हुआ और कुहाडेके सिवाय वह सोने और चांदी का कुहाडा भी उस लकडहारेको इनामके तौर दे दिया।

लोभ करना बडा पाप है। लोभ पापका बाप है इसलिये लोभ (लालच) कदापि नहि करना चाहिये। देखो लकडहारेने सोने और चांदीके कुहाडेका लोभ नहि किया तो वे दोनों ही कुहाडे उस देवने प्रसन्न होकर दे दिये। यदि वह लकडहारा लोभमें आकर सोनेके कुहाडेको अपना कुहाडा कह देता तो वह देव उसे झूठा समझकर उल्टा दंड देता और उसका लोहे का कुल्हाडा भी उसे नहीं मिलता, इसकारण लोभ न करके जो कुछ खाना पहरना मिले, उसीमें सन्तुष्ट रहना चाहिये।

दशवां पाठ।

गुरु स्तुति।

वंदों दिगंबर गुरुचरन जग,—तरन तारन जान।
जे भरम भारी रोगको, हैं राजवैद्य महान॥
जिनके अनुग्रह बिन कभी, नहि कटै कर्मजंजीर।
ते साधु मेरे उर वसहु, मेरी हरहु पातकपीर। १॥
यह तन अपावन अथिर है, संसार सकल असार।
ये भोग विष पकवानसे, इहभांति सोच विचार॥
तपविरचि श्रीमुनि वन वसे, सब छार परिगह भीर।
ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरहु पातक पीर॥ २॥
जे कांच कंचन सम गिनहिं, अरि मित्र एक स्वरूप।
निंदा बडाई सारिखी,(१) वनखंड, शहर अनूप॥
सुख दुःख जीवन मरनमें, नहि खुशी नहि दिलगीर।
ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरहु पातक पीर॥ ३॥

१ समान बराबर।

जे बाह्य परवत वन बसैं, गिरिगुफा महल मनोग ।
सिल सेज समता सहचरी, शशिकिरन दीपक जोग ॥
मृग मित्र,भोजन तपमई, विज्ञान निरमल नीर ।
ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरहु पातक पीर ॥ ४ ॥
सूखहिं सरोवर जल भरे,सूखहिं तरंगिनि-तोय (१) ।
बाटहिं (२) बटोही (३) ना चलें, जहँ घाम गरमी होय ॥
तिह काल मुनिवर तप तपहिं, गिरिशिखर ठाड़े धीर ।
ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरहु पातक पीर ॥ ५ ॥
घन घोर गरजहिं घन घटा, जल परहिं पावस (४) काल ।
चहुं ओर चमकें बीजुरी, अति चलै सीरी ब्याल (५)
तरुहेठ (६) तिष्ठहिं तब जती, एकांत अचल शरीर ।
ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरहु पातक पीर ॥ ६ ॥
जब शीतमास तुषारसों, दाहै सकल वनराय ।
जब जमै पानी पोखरां, (७) थरहरै सबकी काय ॥
तब नगर निवसें चौहटे, (८) अथवा नदीके तीर ।
ते साधु मेरे उर बसो, मेरी हरहु पातक पीर ॥ ७ ॥
कर जोर 'भूधर' बीनवै, कब मिलहिं वे मुनिराज ।
यह आश मनकी कब फलै, मेरे सरहिं सगरे काज ॥
संसार विषम विदेशमें, जे बिना कारण वीर ।
ते साधु मेरे उर बसो, मेरी हरहु पातक पीर ॥ ८ ॥

---

१ नदीका जल । २ रास्तेमें । ३ राहगीर, मुसाफिर । ४ बरसातमें ५ ठंडी पवन । ६ वृक्षके नीचे । ७ तालाबोंमें । ८ चौपट मैदानमें ।

ग्यारहवां पाठ।

जीव अजीव।

शिष्य—क्यों गुरुजी महाराज ! जीव अजीव किसको कहते है ?

गुरु—जो चले फिरै जाने उसको जीव कहते है और चलै फिरै जाने नहीं, जहाका तहा पडा रहै, ऐसे अचेतन पदार्थको अजीव कहते है।

शिष्य—पृथ्वी, पहाड, वृक्ष, अग्नि, हवा, पानी ये जीव है कि अजीव ह।

गुरु—ये सब जीव है।

शिष्य—आपने कहा था कि जो चले फिरै सो जीव है सो पृथ्वी पहाड वृक्ष वगैरह कहा चलते फिरते है ?

गुरु—भाई जीव दो प्रकारके है। एक त्रस और एक स्थावर। जो चले फिरै ऐसे द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय पचेंद्रिय ये तो त्रस कहलाते हैं और पृथ्वी, जल, अग्नि, हवा, वनस्पति ये पाच प्रकारके एकेंद्रियजीव हैं। इनमें एकेंद्रिय होनेसे ये चल फिर नहि सकते पर तु ये जानते जरूर है अर्थात इनको ज्ञान अवश्य है, इसलिये ये भी जीव है।

शिष्य—इन्द्रिय किसको कहते है।

गुरु—जिसके द्वारा जीवको ज्ञान हो, उसे इन्द्रिय कहते हैं।

शिष्य—इन्द्रिया कितनी है और कौन २ सी हैं।

गुरु—इन्द्रिया पाच है स्पर्शन (चमडा) रसना (जीभ)। घ्राण (नाक) चक्षु (नेत्र) श्रोत्र (कान)।

शिष्य—इन पाचों इन्द्रियोंमसे पृथिवी जल अग्नि हवा और वनस्पति इनके कौनसी एक इन्द्रिय होती है।

गुरु—इन सबके एक स्पर्शन इंद्रिय होती है। ये सब जीव ठंढी गर्म हवा, धूप, छांह अथवा अन्य पदार्थ शरीरपर लगनेमे अर्थात् चमडे पर स्पर्श होनेसे (छूए जानेसे) जान जाते हैं कि यह ठंढ या गर्म पदार्थ लगा।

शिष्य—लट (गिडार) केंचुएके कितनी इंद्रियें होती हैं।

गुरु—ये सब द्वींद्रिय जीव हैं। इनके स्पर्शन और रसना ये दो इंद्रियां होती हैं।

शिष्य—तीन इंद्रिय किनके होती हैं।

गुरु—चिंवटी, ईली, घुण वगैरह जीवोंके स्पर्शन, रसना, घ्राण ये तीन इंद्रिया होती हैं। इसकारण इनको तेइंद्रिय जीव कहते हैं।

शिष्य—मक्खी, ततईया, भौंरा वगैरह केइंद्रिय जीव हैं।

गुरु—इनके स्पर्शन रसना घ्राण और चक्षु ये चार इंद्रियां होती हैं, इसकारण इनको चौइंद्री जीव कहते हैं।

शिष्य—और पचेंद्रिय जीव कौन २ से होते हैं।

गुरु—मनुष्य, देव, नारकी और गाय, बैल, घोडा, हाथी, चिडी, कौवा, कबूतर वगैरह तिर्यंच पंचेंद्रिय जीव होते हैं। इनके सब इंद्रियां होती हैं।

शिष्य—गुरुजी! जीव और इंद्रियें तो समझी परतु अजीव पदार्थ कौन २ से हैं।

गुरु—जिन पदार्थोंमें ऊपर लिखी पांचों इंद्रियोंमेंसे एक भी इंद्रिय नहीं हो, ऐसी सूकी मिट्टी पत्थर, ईंट, चूना, सूका लक्कड, कोयला वगैरह सब अजीव पदार्थ हैं।

शिष्य—बहुत ठीक है। इन जीव अजीवके विषयमें और भी

बहुतसा पूछना है परन्तु इतना अच्छी तरहसे याद करके फिर कभी पूछूंगा।

गुरु-तथास्तु।

बारहवां पाठ।

अहिंसाणुव्रत।

क्रोध मान माया लोभ राग द्वेष वगैरह पन्द्रह(१)प्रकारके प्रमादोंमेसे किसी भी प्रमादके वश होकर अपने वा परके प्राण नष्ट करनेको हिंसा कहते हैं और इस प्रकारकी हिंसाके सर्वथा त्याग करनेको अहिंसाव्रत कहते हैं। परन्तु द्वींद्रिय, त्रींद्रिय, चतुरिंद्रिय, और पचेंद्रिय, इन त्रस जीवोंकी (चलते फिरते जगम जीवोंकी हिंसाके यथाशक्ति त्याग करनेको ही अहिंसाणुव्रत कहते हैं। थोडे वा यथाशक्ति त्याग करनेका नाम अणुव्रत है। जिसको एकदेश त्याग भी कहते हैं। एकेंद्रियादिक समस्त प्रकारके जीवोंकी हिंसा का सर्वथा त्याग करना है सो तो मुनिका महाव्रत है अर्थात मुनियोंके पूर्ण अहिंसाणुव्रत होता है और गृहस्थोंके एक देशत्यागरूप अहिंसाव्रत अर्थात् अहिंसाणुव्रत होता है।

जिनमतमें त्रसहिंसा चार प्रकारकी मानी गई है। जैसे— सकल्पीहिंसा १, आरंभी हिंसा २, उद्यमीहिंसा ३, और विरोधी हिंसा ४।

१। अपने चित्तसे चाहकर किसी जीवको मारने वा पीडित करनेको सकल्पीहिंसा कहते हैं।

---

१ पाचइंद्रियोंके पाच विषय, क्रोध मान माया लोभ ये चार कषाय, स्त्रीकथा, चोरकथा, राज्यकथा और भोजनकथा ये चार विकथायें एक-रागद्वेष और एक निद्रा ये सब पन्द्रह प्रमाद हैं।

२। गृहस्थके घर जो किसी वस्तु कूटने, पीसने, रसोई बनाने, बुहारी देने आदि कार्योंमें (आरंभोंमें) प्रमादरहित होकर यत्नाचारसे प्रवर्त्तनेपर भी चिवटी वगैरह अनेक जीवोंकी हिंसा होती है उसको आरंभीहिंसा कहते हैं।

३। अन्नके कोठे भरने, अन्नादिक पदार्थ खरीदने, वेचने, खेती करने, कलकारखाने खोलने आदि रोजगार करनेमें जो हिंसा होती है, उसको उद्यमीहिंसा कहते हैं।

४। और राजा महराजाओंको प्रजाकी रक्षा करनेकेलिये अथवा देशमें शांति स्थापन करनेकेलिये शत्रुकी सेनासे (फौजके साथ) युद्ध वगैरह करनेमें जो हिंसा होती है, उसको विरोधी हिंसा कहते हैं।

इन चार प्रकारकी त्रसहिंसाओंमेंसे गृहस्थ केवल संकल्पी हिंसाका त्याग कर सकता है। अन्य तीन हिंसाओंको यथाशक्ति त्याग करनेका गृहस्थोंकेलिये उपदेश है। इस कारण जिनको श्रावक बनना हो, उनको मन वचन काय और कृत कारित अनुमोदनासे संकल्पीहिंसाका त्याग तो अवश्य ही करना चाहिये और अन्य तीन प्रकारकी हिंसाओंका जिससे जितना बन सके यथाशक्ति त्याग करना चाहिये अर्थात जहांतक बने प्रत्येक कार्यमें प्रमाद छोडकर यत्नाचार पूर्वक अपनी प्रवृत्ति करना चाहिये।

जो कोई अहिंसाणुव्रतका धारण करे, उसको किसी जीवको लाठी वगैरहसे मारना पीटना १, नाक वगैरह छेदन करना २, किसी प्रकारकी पीडा देना ३, अधिक भार लादना ४, और अन्न पानादिक रोकना वा अन्नपानादिक देनेमें त्रुटि करना ५ आदि कार्य भी छोड देना चाहिये। इन कार्यों को छोड देनेसे ही निरतिचार (निर्दोष-निष्पन्न) अहिंसाणुव्रत पल सकता है।

तेरहवा पाठ।

मनसुख और धनसुख।

मनसुख नामका एक ब्राह्मणका लडका था। वह हमेशह हाथमें छडी लियेहुये फिरा करता था। रास्तेमें गाय बैल गधा घोडा बकरी कुत्ता वगेरह किसी भी पशु पक्षी वगेरह अन्य प्राणीको देखता तो उसे अपनी छडीसे अवश्य ही एक दो बार मार दिया करता था। एक दिन इसीप्रकार एक कुत्ते को मारते हुए धनसुख नामके एक जैनीके लडकेने देखा तो उसने मनसुखसे कहा कि—भाई मनसुख! तू यह क्या करता है? मनसुखने कहा कि—तुझे इससे क्या मतलब? मेरे मनमें आता है सो करताहू। धनसुखने कहा कि भाई मनसुखलाल! जरा विचार करके देख कि—इसप्रकारका पापकार्य करना तुझ सरीखे समझदारको क्या अच्छा लगता है? मनसुखने कहा कि भाई धनसुख इसमें पापका क्या काम है? तब धनसुखने कहा कि—भाई मनसुख तू यह छडी मेरे हाथमें दे और मैं इस छडीसे तुझे मारु तो तुझे कैसी लगे? तब मनसुखने कहा कि मेरे मारेगा तो मुझे बहुत ही बुरी लगेगी। तब धनसुखने कहा कि जब तुझे बुरी लगेगी तो इस कुत्ते को तूने मारा सो इसको क्यों न बुरी लगेगी? भाई मनसुख जिसप्रकार अपना जीव अपनको प्यारा लगता है, इसीप्रकार कुत्ता बकरी गाय बैल वगेरहको भी प्यारा लगता है। इनको मारनेसे हमारी तरह इनको भी बडा भारी दुःख होता है। इसकारण किसी भी जीवको दुःख देना पीडा पहुचाना कदापि उचित नहीं है। दूसरेको दुःख देनेसे हिंसा नामका बडा भारी पाप लगता है। तब मनसुखने कहा कि—भाई धनसुख तेरे

इस कहनेसे अब मुझे भले प्रकार मालूम हो गया कि—जिसप्रकार मारनेसे अपनेको दुःख होता है उसीप्रकार सब जीवोंको दुख होता है। क्यों भाई धनसुख! तुझे यह बात किसने समझायी? तब धनसुखने कहा कि भाई मनसुख मैं जैनीका लडका हूं। हमारे जैनमतमें जीवदया पालन करनेपर बहुत कुछ उपदेश लिखा है सो मैं अपने यहां मंदिरजीमें शास्त्र सुननेको जाता हूं तो ये सब बातें सुननेमें आती है। हमारे यहां ऐसा लिखा है कि—किसी भी जीवको न तो आप मारै अथवा किसीप्रकारकी पीडा दे और न दूसरेको कहकर किसी जीवको मरवावे और कोई दुष्ट किसी जीवको मारता हो तो उसकी प्रशंसा नहिं करै। इसप्रकार मन वचन कायसे कृत कारित अनुमोदनारूप हिंसा करनेको जिनेंद्र भगवानने सख्त मनाई की है। मनसुखने कहा कि बहुत ठीक, अबसे मैं किसी जीवको न तो मारूंगा और न किसीप्रकारकी पीडा दूंगा।

सारांश—यह है कि धनसुखकी तरह हरएक जैनीके लडकेको अपने मनमें दयाभाव रखना चाहिये और मनसुखकी तरह दूसरेके कहनेसे अपनी खोटी आदतें छोड देना चाहिये।

चौदहवां पाठ।

बारहभावना

१ अनित्यभावना।

दोहा।

राजा राणा छत्रपति, हाथिनके असवार।
मरना सबको एकदिन, अपनी अपनी वार॥ १॥

२। असरनभावना।

दलबल देई देवता, मातपिता परिवार।
मरतीबिरिया जीवको, कोउ न राखनहार ॥२॥

३। संसारभावना।

दामबिना निरधन दुखी, तृष्णावश धनवान।
कहूं न सुख संसारमें सब जग देख्यो छान ॥ ३ ॥

४। एकत्वभावना

आप अकेलो अवतरैं, मरैं अकेलो होय।
यों कबहूं या जीवको, साथी सगो न कोय ॥ ४ ॥

५। अन्यत्वभावना।

जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपनो कोय।
घर संपति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय ॥ ५ ॥

६। अशुचित्वभावना।

दिपै चामचादरमढी, हाड पींजरा देह।
भीतर यासम जगतमें, और नहीं घिनगेह ॥ ६ ॥

७। आस्रवभावना। सोरठा।

मोह नींदके जोर, जगवासी घूमैं सदा।
कर्मचोर चहुं ओर, सरबस लूटैं सुधि नहीं ॥ ७ ॥

८। संवरभावना

सतगुरु देय जगाय, मोहनींद जब उपसमैं।
तब कछु बने उपाय, कर्म चोर आवत रुकैं ॥ ८ ॥

निर्जराभावना। दोहा।

ज्ञानदीप तप तेलभर, घर शोधै भ्रम छोर।
याविध बिन निकसै नहीं, पैठे पूरब चोर ॥ ९ ॥

पचमहाव्रत सचरन, समिति पचपरकार।
प्रबल पंच इंद्रियविजय, धार निरजरा सार॥ १०॥

१०। लोकभावना।

चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुषसठान।
तामें जीव अनादितैं, भरमत हैं बिन ज्ञान॥ ११॥

११। बोधिदुर्लभभावना।

धन कन कचन राजसुख, सबहि सुलभकर जान।
दुर्लभ है संसारमें, एक जथारथ ज्ञान॥ १२॥

१२। धर्मभावना

जाचे सुरतरु देय सुख, चिंतत चिंता रैन।
बिन जाचे बिन चिंतये, धर्म सकल सुखदैन॥ १३॥

पंद्रहवां पाठ।

सत्याणुव्रत।

आठवें पाठमें जो बारह व्रतोंके नाम बताये गये हैं, उनमें दूसरा सत्याणुव्रत भी है। लौकिकमें सत्य जैसाका तैसा कहनेको कहते हैं परंतु कहीं कहीं जैसाका तैसा कहनेमें बड़ी हानि हो जाती है। हमारे यहां सत्यका लक्षण प्रमादरहित वचन बोलना किया है सो ठीक है। अर्थात् प्रमादके वश जो वचन कहे जाते हैं वे सब असत्य होते हैं। असत्यका उलटा अर्थात् प्रमादरहित वचन कहना सो सत्य है। असत्यका यथाशक्ति त्याग करना अर्थात् स्थूल असत्यका त्याग करना सो सत्याणुव्रत है। इस व्रतके धारण करनेवालोंको अप्रियवचन, कठोर वचन, भयकारक वचन, और मिथ्या उपदेश देना, किसीकी गुप्त बात

को निंदाके साथ प्रगट करना, झूठी बातें लिखना, धरोहरको हरलेनेका वचन कहना चुगली वा निंदा करना वगेरह वचन भी नहिं कहना चाहिये। इसप्रकारके अतीचार छोड देनेमें निरति चार सत्याणुव्रत पल सकता है।

इस व्रतके पालनेमें परलोकमें (स्वर्गादिकमें) सुख होनेके सिवाय इस लोकमें भी सुख यश और प्रतिष्ठाकी प्राप्ति होती है। तथा सत्यवादीके वचनोंको सब कोई मानते हैं। सत्य वादीका धंदा रोजगार भी खूब चलता है। इस कारण हे बालको! तुम आजसे झूठ बोलना छोडदो। कोई तुमको लालच देकर झूठ बुलवावे तो भी तुम कदापि झूठ मत बोलो। तुम्हारा झूठ बोलना जनधर्म और जैनजातिको महाकलंक लगाना है।

सोलहवां पाठ।

सत्यवादी बालक।

स्वरूपचन्द नामका एक लडका था। उसकी उमर ८ वर्षकी थी। एकदिन दोपहरके समय खेलनेके पश्चात घर आकर हथेली पर गाल रखकर अतिशय चिंतामें मग्न हुआ बैठा था। उसको किसी प्रकारका रोग हुआ होगा, ऐसा समझकर पूछा गया तो उसने कहा कि मुझे कुछ भी नहिं हुआ, परंतु एकांतमें बैठा हुआ दीर्घनि श्वास डालने लगा। सामको कुछ भी नहीं खाया और माताके कमरेके पासकी कोठरीमें जा सोया।

उसने सोनेके एक घंटे बाद उसकी दासीने कोठरीमें जाकर देखा, तो वह लडका बिछौनेपर मछलीकी तरह छटपटा रहा है। दासीने भयचकित हो पूछा कि लल्ला! तुम इसप्रकार

क्यों करते हो ? लड़केने कहा कि तू माको बुला ला, उसके पास जबतक मैं अपने दुःखकी बात न कहूंगा तबतक मैं किसी प्रकार नहिं बच सकता।

दासी यह बात सुनकर घबराहटके साथ उसकी माके पास गई और यह बात कही तो उसकी माता त्वरित ही अपने प्रिय पुत्रके निकट आई। स्वरूपचंद अपनी माताको देखते ही गलेमें हाथ डालकर अश्रुजलसे माताका हृदय सींचने लगा अर्थात् रोने लगा। माताने बार बार दुःखकी बात पूछी, तो बहुत देरके बाद उसने गद्गद स्वरसे कहा कि—मा ! मुझे क्षमा करना, आज मैं ने दुष्ट बालककी तरह एक बहुत खराब काम किया है अर्थात् मैंने एक मिथ्या वचन कहा है, वह मैं ने तुमसे भी छुपा रक्खा था। मैं ने अपने मित्रोंके साथ खेलते समय एक असत्य वचन कह कर उन्हें जीत लिया और उस जीतके लिये मैंने यह बात सर्वथा छुपा रक्खी। मैं भलेप्रकार जानता हूं कि झूठ बोलना बड़ा पाप है। मुझे परलोकमें इसका बहुत बुरा फल भोगना पड़ेगा। इसके सिवाय यह बात प्रगट हो जायगी, तो सब कोई मुझे मिथ्यावादी (झूठा) समझ घृणा करेंगे, इसी बातको विचारनेसे मेरा मन अतिशय व्याकुल हो गया है, और इसी कारण मैं ने तुझे बुलाया है, कदाचित् तेरे पास मनका दुःख कहनेमें कुछ कल (चैन) पड़ जाय।

इसके उत्तरमें स्वरूपचंदकी माताने कहा कि बेटे ! जो कोई किये हुए अपराधको स्वीकार करके उसके लिये पश्चात्ताप करते हैं और भविष्यतमें अपनेको उन अपराधोंसे दूर रखनेकेलिये दृढ़प्रतिज्ञ होते हैं, उनका अपराध सब जगह माफ होता है। यदि

तुम इसप्रकारका बुरा काम भविष्यतमे नहिं करोगे और इस अपराधके लिये मित्रोंसे क्षमा प्रार्थना कर लोगे तो तुमपर सब लोग प्यार ही करेंगे, एक बार अपराध करनेसे तुम बुरे नहिं कहला सकते।

स्वरूपचद्र अपनी माताके इसप्रकार योग्य वचन सुनकर तत्काल ही स्वस्थ हो, सुखसे सोगया। दूसरे दिन शय्यासे उठ कर अपने मित्रोंके पास गया और अपने उस अपराधको प्रगट करके क्षमा प्रार्थना की तो सब जने क्षमा करके उसकी प्रशसा करने लगे। उस दिनसे फिर कभी स्वरूपचद्रने मिथ्याभाषण नहिं किया।

हे बालको! जगतमें कोई भी मनुष्य नहीं होगा जिससे कि किसीप्रकारका अपराध न बना हो। परतु जो कोई अपराध करके स्वीकार कर लेते हैं और भविष्यतमें वैसा अपराध नहिं करनेकी दृढ प्रतिज्ञा कर लेते हैं, उनको उत्तमश्रेणीका मनुष्य कहते हैं। सो तुमको भी स्वरूपचदके समान असत्यभाषणका त्यागकर सत्यभाषी बालक बनना चाहिये।

सतरहवां पाठ।

सत्यवादी चोर।

किसी समय एक राजा अपने कारागृहको देखनेकेलिये गया था। वहा उसने चार कैदियोंको कामपर जाते हुये देखा और उनको खडा करके प्रत्येकसे कैदमें पडनेका कारण पूछा।

एक कदीने कहा कि हजूर मैने कोई अपराध नहिं किया, लोगोंने झूठी गवाही देकर मुझे फसा दिया है। दूसरेने कहा कि, महाराज! मुझे हाकिमने दुश्मनीसे कैदमें डाल दिया है।

तीसरेने कहा कि हजूर मैं किसी दूसरे अपराधीके बदलेमें पकड़ा गया हूं इसप्रकार तीनों कैदियोंने अपना बनावटी (झूठा) हाल कहकर राजासे छूटनेकी प्रार्थना की। इनको कुछ भी उत्तर न देकर राजाने चौथे कैदीसे पूछा कि—तुम किस अपराधसे कैदमें पड़े? तब चौथे कैदीने कहा कि—धर्मावतार महाराज! मैंने अपने पडोसीके घरसे रुपयोंकी थैली चुराई थी, मैं किस मुंहसे क्षमा मांगू।

राजाने प्रसन्न होकर जहलदारोगाको हुक्म दिया कि, इसकी बेड़ी काटकर छोड़ दो। इसने झूठ बोलकर अपना अपराध नहिं बढ़ाया किंतु सत्य कहकर अपना अपराध घटा दिया है।

हे बालको! देखो सत्य बोलनेका कैसा फल है तुम कदापि असत्य नहिं बोलना। असत्य वचन ६ प्रकारके होते हैं।

पहिला असत्य मौजूदको नहीं मौजूद कहना जैसे किसीने पूछा कि, गुलाबचंद घरमें है या नहीं, तो घरमें होते हुए भी ऐसा उत्तर देना कि 'नहीं है।' दूसरा नहिं मौजूदको मौजूद कहना जैसे किसीने पूछा कि, गुलाबचंद घरमें है या नहीं? तो इसके उत्तरमें गुलाबचंदके न होते हुये भी कह देना कि 'है।' तीसरा असत्य, औरका और कह देना है। जैसे किसीने पूछा कि "इस घरमें कौनसा पशु बंधा है। तो इसके उत्तरमें घोड़ेके होते हुए "बैल बंधा है" ऐसा कह देना। चौथा-असत्य गर्हित वचन कहना है, जैसे चुगली करना, ठट्टेबाजी करना, ककश वचन कहना, तथा बकवाद करना, नीतिविरुद्ध वचन कहने, इत्यादि। पांचवा असत्य पाप वचन कहना है, जैसे किसी जीवको मारने, पीटने व तकलीफ देनेके वचन कहने, चोर्यवचन कहने व छल

कपटके वचन कहने। छठा असत्य-अप्रिय वचन कहना है, जैसे भयकारक, शोकदायक, पीडाकारी, लडाई करानेवाले वचन। इसप्रकारके असत्य वचन, क्रोध मान माया लोमादि कषायोंके वशीभूत होकर कदापि नहिं कहने चाहिये।

अठरहवां पाठ।

डरपोक लडका।

नेमिचंद नामका एक लडका था। बालकपनसे ही डरपोक था। ज्योंज्यों वह बडी उमरका होने लगा त्यों त्यो उसका डर-पोकपन भी बढने लगा और तो क्या वह दिनमें अकेला किसी जगह नहिं रह सकता था, तब रात्रिमें तो फिर क्योंकर रह सकता। रात्रिमें कभी कभी तो वह अपनी छाया देखकर ही डरने लग जाता था। चोमासेमें जब बिजलीकी गडगडाहट होती थी, उस समय तो वह अत्यंत घबडाकर रोने लग जाता था। कोई छोटा मोटा जानवर उसके देखनेमें आता अथवा उसके शरीरके छू जाता तो वह जोरसे रोने लगता था।

नेमिचंदके इसप्रकारके डरपोक स्वभावसे उसके माता पिता वगेरह सब दुःखित हो गये। वह जैनपाठशालामें अकेला नहिं जा सकता था, इसकारण उसका पिता प्रतिदिन उसे पाठशालामें पहुंचा आता था और छुट्टीके समय लानेके लिये भी उसे जाना पडता था। तत्पश्चात् नेमिचंदके पिताके प्रार्थना करनेपर पाठशालाके अध्यापक महाशयने नेमिचंदके साथ एक अभयचंद नामके लडकेको साथी बना दिया। अभयचंदमें नामानुसार गुण था। एक दिन अभयचंदने नेमिचंदसे कहा—कि तू मेरे साथ हवा खानेको चले तो मैं तुझे हिम्मत दे सकता हूं।

नेमिचंद—हिम्मत क्या चीज है? और वह अपने पास हो तो क्या काम आ सकती है?

अभयचंद—भाई नेमिचंद! यदि अपने पास हिम्मत रहे तो फिर अपन कभी किसीसे डर नहि सकते।

नेमिचंद—तब तो भाई मुझे हिम्मत अवश्य ही देना चाहिये क्योंकि मैं बड़ा भारी डरपोक हूं।

अभयचंद—नेमिचंद तू काहेसे डरता है?

नेमिचंद—मैं सबसे डरता हूं।

अभयचंद—तू किसलिये डरता है।

नेमिचंद—मैं इसलिये डरता हूं कि कोई मुझे किसी प्रकारकी हानि न करे।

अभयचंद—तो भाई! अबसे तू अपने मनमें ऐसा विचार किया कर कि—मुझे कोई भी किसीप्रकारकी हानि नहि पहुंचा सकता। दूसरेके जिसप्रकार हाथ पाव हैं मेरे भी हाथ पाव हैं। दूसरेमें जैसी शक्ति है मेरेमें भी वैसी शक्ति है। इसप्रकार विचार करनेसे तेरे चित्तमें हिम्मत आ जायगी और उस हिम्मतके कारण तेरे शरीरमें ताकत भी आ जायगी, तब तुम किसीसे भी नहि डरोगे।

नेमिचंद—तेरा कहना ठीक है ऐसा विचार करनेसे डर नहिं लग सकता, अबसे मैं ऐसा ही करनेकी आदत (स्वभाव) डालूंगा।

अभयचंद—बस इसीका नाम हिम्मत या साहस है जिसमें यह हिम्मत होती है वह किसीसे भी भयभीत नहि होता जिसमें हिम्मत नहीं होती उसको तुच्छसे तुच्छ मनुष्य भी दबा लेता है

और उसको सब जने डरपोक नामरद अथवा कायर कहकर उसकी हसी उडाते हैं। इसकारण हरएक लडकको अपने चित्तमें हिम्मत (साहस) रखना चाहिये।

नेमीचद–अब मै भलेप्रकार समझ गया, अबसे मै किसीसे भी नहि डरु गा।

इसके पश्चात् नेमिचन्द अभयचन्दकी सगतिमें रहकर उससे भी अधिक साहसी (हिम्मतवाला) होगया। एकदिन एक ब्राह्मणका लडका नदीमें गिरकर डूब गया था, उस वक्त नेमिचन्दके सिवाय वहांपर कोई भी नहीं था। नेमिचन्द देखते ही झट पट विना कपडे खोले ही नदीमें कूदपडा और डुबकी लगाकर बडी मुसकिलसे उस लडकेको जीता जागता निकाल लाया जिससे ग्रामके सब लोगोंने उसे धन्यवाद दिया और उस गांव के जमीदारकी तरफसे एक सोनेका तमगा भी इनाम में मिला।

सार–सब ही लडकोंको साहसी बनना चाहिये। साहस ही सब सपदाओंकी प्राप्तिका एकमात्र कारण है। साहससे ही ऐनक मुनिकेसे कठिन व्रत, तप धारण कर सकता है।

उन्नीसवां पाठ

सत्यके विषयमें दोहा।

सांच बरोबर तप नहीं, झूठ बरोबर पाप।
जाके हिरदे साच है, ताके हिरदे आप ॥ १ ॥
सत्य नावपर जो चढत, या भवसिंधु अपार।
आप तरें अरु औरको, देवे पार उतार ॥ २ ॥

जहां सत्य तहं धर्म है, जहां सत्य तहं योग।
जहां सत्य तहं श्री रहत, जहां सत्य तहं भाग ॥ ३ ॥
जो आरक्षक मुख कहै, नितप्रति साची बात।
मान प्रतिष्ठा पायकर, जगत होय विख्यात ॥ ४ ॥
जगत माहिं सब कायम, सच बोलेका मान।
सबहिं कर जन प्रेमतें, सांचेका गुण गान ॥ ५ ॥
एक साचकी आंखमें, लाखनका व्यापार।
चलता है बाजारमें, यामें नाहिं बिगार ॥ ६ ॥
झूठेका जगमें घटै, मान बहै अपमान।
झूठ वचनके पापतें, पावै दुख महान ॥ ७ ॥
इहकारण सब जन सदा, बोलो सांची बात।
सत्याणुव्रत धारकर, सुख भोगो दिनरात ॥ ८ ॥

बीसवां पाठ।

आहार (भोजन)

समस्त जीवोंको आहारकी अत्यंत आवश्यकता रहती है क्योंकि बिना आहारके कोई जीव नहिं जी सकता। समस्त जीवोंको आहार प्रायः तैयार मिलता है परन्तु मनुष्योंको अपना भोजन स्वयं तैयार करना पड़ता है। मनुष्यके खानेकी वस्तुओंमें अनेक चीजें तो वनस्पतिसे पैदा होती हैं, जैसे फल, तरकारी, मिरच, अन्न वगैरह और बहुतसी चीजें गौ भैंस आदिसे प्राप्त होती हैं। जैसे घी दूध दही वगैरह। और बहुतसी चीजें जमीनसे प्राप्त होती हैं जैसे नमक खार वगैरह। शरीर निरोग रखने और पुष्ट पानेके लिये मनुष्योंको अच्छा पथ्य और पुष्टिकारक भोजन

करना चाहिये। परन्तु भोजन करते समय ६ बातों पर ध्यान अवश्य ही रखना चाहिये।

१। जो भोजन किया जावे वह अच्छी तरह पका हुआ होना चाहिये। कच्चा होनेसे बहुत देरमें हजम होता है और शरीरमें अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न कर देता है।

२। भोजन पेट भरकर करना चाहिये। परन्तु भूखसे अधिक कदापि नहीं करना चाहिये। यदि भूखसे अधिक खाओगे तो अजीर्ण (बदहजमी) होनेसे अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होवेंगे।

३। विना भूखके किसीके आग्रहसे कदापि भोजन मत करो क्योंकि अजीर्णता पर भोजन करना विष खानेके समान है।

४। एक ही वार बहुतसा भोजन नहिं करके भूख लगने पर कई वार थोडा थोडा भोजन करना लाभदायक है। क्योंकि इसप्रकार करनेसे कभी सुस्ती नहिं आती और पाचनशक्ति भी बढती है। बहुतसे अजैनो दिनमें दश बजे भोजन करके फिर रातको ६ १० बजे भोजन करते हैं, सो ठीक नहीं करते हैं क्योंकि निरोग मनुष्यको भोजन कैसा ही गरिष्ठ क्यों न हो, ६ घंटेमें हजम हो जाता है इसलिये दिनको चार या पांच बजे भोजन अवश्य करना चाहिये। रात्रिको भोजन करनेसे अनेक जीवोंकी हिंसाके अतिरिक्त भोजन करके सो जानेसे वह भले प्रकार नहिं पचता और अनेक रोगोंको उत्पन्न कर देता है, ऐसा वैद्यक शास्त्र और बडे २ डाक्टरोंका मत है।

५। प्रतिदिन एक ही नियत समय पर भोजन करना चाहिये नित्यके समयको टालकर अथवा घंटे आध घंटे पहिले ही भोजन करनेसे बहुत हानि होती है, इसलिये नित्य नौ बजेसे बारह बजेके

पहिले २ निर्दिष्ट समय पर ही भोजन करना चाहिये। नौपजेसे पहिले भोजन वा दूध ठंडाई चाह वगेरह पतले पदार्थ कभी नहिं खाना पीना चाहिये।

६। सदा एकही प्रकारका भोजन नहीं करना चाहिये। जैसी ऋतु पलटती जाय, वैसे वैसे भोजन भी पलटते रहना चाहिये, तथा देश, उमर उद्यम और शरीरके बलके अनुसार भी भोजन बदलते रहना चाहिये।

इकीसवा पाठ

अचौर्याणुव्रत।

आठवें पाठमें जो पांच अणुव्रतोंके नाम बताये गये हैं उनमें तीसरा अचौर्याणुव्रत है। अचौर्य नाम चोरी नहीं करनेका या चोरीके त्याग करनेका है। हमारे श्रावकाचारमें इसका स्वरूप इस प्रकार कहा है कि—प्रमादके वश होकर मालिककी आज्ञा बिना किसी की गिरी हुई (पड़ी हुई) रक्खीहुई भूलीहुई या धरोहर (अमानत) रक्खी हुई वस्तुको ग्रहण करना व उठाकर किसी दूसरको दे देना सो चोरी है। चोरी नहीं करनेकी प्रतिज्ञाको अचौर्याणुव्रत कहते हैं। अचौर्याणुव्रत पालनेवालोंको चोरीका उपाय बताना, चोरीका द्रव्य लेना, राजाके कर आदि (टैक्स वगैरह) नियमोंका उल्लंघन करना अधिक [illegible] वस्तु मिलाकर चलादेना और नापने [illegible]
हीनाधिक रखना ये

उसका सब कोई विश्वास करता है, और उसका व्यापार बहुत बढता है। ऐसे सच्चे व्यापारसे ही अटूट धनकी प्राप्ति होती है, धनसे समस्त इष्ट पदार्थोंकी प्राप्ति होती है। तथा धर्मसाधन करनेकी नानाप्रकारकी सामग्री मिल सकती है और धर्मसाधनसे इसलोक में सुख और परलोकमें स्वर्गादि शुभगति होती है।

यह अचौर्याणुव्रत मनुष्यका (आत्माका) एक धर्म है अर्थात् गुण है। इस गुणके न होनेसे यह मनुष्य पापी कहलाता है, इस कारण इस चोरी पापको छोडकर अचौर्याणुव्रतको धारण करना चाहिये। लोभमें फसकर कदापि परधनकी वांछा नहीं करनी चाहिये।

बाईसवां पाठ।

चोरीका फल।

गगाराम नामका एक लडका प्रतिदिन पाठशालामें पढनेको जाया करता था। एक दिन वह पाठशालासे किसीका एक चाकू चुराकर अपने घर ले आया। इसपर उसकी माताने कुछ भी नहीं कहा और धमकानेके बदले उस चाकूको बेच उसे खानेके लिये बाजारसे मिठाई लादी। इस लालचसे गगारामका मन चोरी करनेमें खूब लगने लगा। वह जो कुछ चुराकर लाता था, अपनी माताको सौंप देता था और माता भी धनके लालचमें पड कर उससे कुछ नहिं कहती थी, सदा उसका लाड प्यार ही किया करती थी।

कुछ दिनोंके बाद वह लडका पक्का चोर होगया और बडी २ चोरिया करने लगा परन्तु दैवयोगसे एक दिन उसने

चोरी करते समय एक आदमीको मारडाला, इससे वह पकड़ा गया और सरकारसे उसको फांसी देनेकी आज्ञा हुई। उसका फांसी पर चढ़ना सुनकर सैकड़ों मनुष्य देखनेके लिये इकट्ठे होगये। उसकी माता भी अपने इकलौते पुत्रसे अन्तिम भेंट करनेके लिये आई और फूट २ कर रोने लगी। गंगारामने अपनी माताने अंतिम भेंट करनेकी सरकारसे आज्ञा मागी। आज्ञा मिलने पर माके पास जाकर कानमें बात कहनेके बहाने उसने अपनी माताकी नाक दांतोंसे काट डाली। जिससे उसकी मा चिल्लाने लगी और सब लोग यह अवस्था देखकर उस लड़केको धिक्कार देने लगे।

गंगारामने कहा भाइयो! आप मुझे बुरा [illegible] बुरा कहते हैं, सबसे पहले मैंने पाठशालामेंसे एक चाकू चुराया था वह चाकू [illegible] इसको (माको) लाकर दे दिया था। इसने मुझे धमकानेके बदले उलटी शाबासी दी, और चाकू बेचकर मुझे मिठाई ला दी। बस उसी दिनसे मेरी आदत चोरी करनेकी पड गई। यदि यह उसी दिन मुझे चोरीके अवगुण बताकर धमका देती, तो आज मेरी यह दशा न होती। इसने मुझे बुरा शिक्षा दी थी, उसका ही प्रतिफल मैंने इसे दिया है। चोरकी यह बात सुनकर सब लोग उसका माको धिक्कार देने लगे, कि हाय! इस दुष्टनीने थोड़ेसे लोभमें पड़कर अपने प्राणोंसे प्यारे पुत्रको कैसा नीच कर्म सिखलाया, जिससे उसे अब फांसी पर लटकना पड़ता है। इसके बाद चोरको फांसी लगादी गई। अपने पाप कर्मके फलसे बड़े दुखसे छटपटाकर गंगारामने उस समय प्राण छोड़े।

[illegible]! चोरी करना, झूठ बोलना आदि जो जो बुरे

काम हैं और जिन्हें सब समझदार लोग बुरा कहते हैं उन्हें तुम कभी और किसीके भी कहनेसे मत करो। जो कभी एक बार भी करोगे तो धीरे धीरे गंगारामकी तरह तुम्हारी भी बुरी आदत पड़ जायगी। क्योंकि बालकपनमें जो स्वभाव पड़ जाता है वह मरण पर्यन्त रहता है। इस कारण बालकपनसे ही अच्छे २ काम करना सीखो। जिस कामको माता पितादि सब लोग बुरा कहें उसको कदापि मत करो। जो माता पिता अपने लड़केको अच्छा बनाकर उससे सुखकी इच्छा करते हैं उनको चाहिये कि पहले आप पढ़कर अपने आचरणोंको सुधारें क्योंकि बहुधा देखनेमें आता है कि बालकोंमें माता पिताओंके समान ही आचरण आ जाते हैं। अगर किसी बुरे लड़केकी संगतिसे कोई अनुचित कार्य बन गया हो तो उसे प्यारके साथ उस कार्यके समस्त अवगुण बताकर भले प्रकार समझा देना चाहिये और धमका देना चाहिये जो आगे को कभी वैसा कार्य नहीं करे।

तेईसवां पाठ।

फूलचन्द और मुकदीलाल।

फूलचन्द और मुकन्दीलाल ये दोनों भाई थे। फूलचन्दकी उमर १० वर्षकी और मुकन्दीलालकी ८ वर्षकी थी। एक दिन प्रात कालके समय वे किसी एक बागमें हवा खानेके लिये गये। उस बागमें एक तरफ अमराई थी। उस अमराईमें आमके सब पेड़ बड़े २ सुन्दर फलोंसे लदे हुये थे। पके हुये आम कोई लाल कोई पीले, कोई तामस रंगवाले थे, उन्हें देखकर फूलचन्दका मन ललचाया और मुकन्दीलालसे बोला कि—क्यों मुकन्दी!

ये आम कैसे उमदा पके हुये दिखते हैं। बागमें इस समय कोई भी नहीं है, चलो अपन कुछ आम तोडकर खा जावें। मुकन्दी लालने कहा कि—छी! छी!! ऐसा बात कभी नहिं कहना। ये आम अपने नहीं हैं। इसलिये तोडना ठीक नहीं है। तब फूलचन्दने कहा कि—अपने नहीं हुये तो क्या हुवा? आम बहुत हैं इनमेंसे थोडेसे अपन तोड लेंगे तो कम होगये ऐसा बागके मालिकको मालूम नहीं हो सकता। आम इतने हैं कि कोई गिनता भी नहिं कर सकता।

मुकन्दीलालने कहाकि—आम बहुत हैं, यह बात सच है तथापि इनमेंसे हम लेवें यह बात बुरी है क्योंकि दूसरेकी वस्तु कितनी भी कम कीमतकी हो परन्तु उसको मालिककी आज्ञाके बिना लेना तो चोरी है। तुझे याद नहीं है कि कुछ दिन पहले पुलिसका सिपाही एक चोरको पकड कर अपने दरवाजेके सामनेसे मारता पीटता ले जारहा था उस समय पिताजीने हम दोनों को क्या कहा था?

पिताजीने क्या कहा था मुझे याद नहीं है, तू ही बता।

तब मुकन्दीलालने कहा—पिताजीने उस समय ऐसा कहा था कि मनुष्य पहिले पहिल 'यह तो तुच्छ बात है' ऐसा समझकर पहिले छोटासा पाप करता है। वह पाप प्रगट नहिं हुआ, तब उससे कुछ बडा पाप करता है। इसीप्रकार करते करते वह बडे २ पाप (हिंसा चोरी वगैरह पाप) करनेमें डरता नहीं है। इस कारण मैं कहता हूं कि—यद्यपि इस समय बागका मालिक हमको नहिं देखता है परन्तु किसी न किसी देवताकी नजर अपनेपर अवश्य होगी। यदि हम चोरीको करते देखकर उसे क्रोध

आगया तो वही हमको दंड देगा अथवा हमको यहाँपर चोरी किये हुये आमों सहित कोल देगा तो फिर बागका मालिक वा गावका मालिक वा गाव भरके मनुष्य हमें देखकर कैसी फजीहत करेंगे ?

छोटे भाईका कहना सुनने पर फूलचन्दको अपने कहनेका बडा पश्चात्ताप हुआ। फूलचन्दको पहिले तो आम तोडनेकी बडी इच्छा व जल्दी थी परन्तु "किसी न किसी देखकी नजर अपने पर अवश्य होगी" यह वाक्य याद आते ही वह उस पाप कर्मसे विरक्त हो गया। बागका मालिक एक दयालु जैमें वहीं पर आडमें खडा हुआ इन दोनों भाइयोंका वार्तालाप सुन रहा था। ऐसा वार्तालाप सुननेसे उसे बडा भारी आनन्द हुआ। वह प्रगट होकर उन दोनोंके पास आया और अच्छे २ आम तोड कर उसने मुकन्दीलालको सदाचारताके व्याख्यानसे खुश होकर बतौर इनामके दे दिये। अपने बडे भाइको अपने अन्याययरूप कथनका पश्चात्ताप हुआ इसलिये मुकन्दीलालने आधे आम उसे दे दिये और दोनों जने खुशी २ अपने घर चले आये। जब अपने माता पिताको बागकी सैरका सब हाल कह सुनाया तो उसे सुनकर उनके माता पिताको जो आनन्द हुआ सो कह नेमें नहिं आ सकता।

हे बालको! तुमको भी मुकन्दीलालके समान अपने माता पिता व गुरुजीसे तथा पुस्तकसे जो जो शिक्षा मिले, उसको धारण कर सदाचारी बनना चाहिये।

चौवीसवां पाठ।

विद्या प्रशंसा।

दोहा।

नृपपद अरु विद्या कबहु, होत न एक समान।
नृपति पूज्य निज देशमें, सब जग विद्यावान॥ १॥
पंडितमें सब गुण लसहिं, मूढ दोषकी खान।
सहस मूढसे बर कहा, पंडित एक सुजान॥ २॥
परनारीको मातसम, परधन धूरि समान।
सब जीवनको आपसम, गिने सो पंडित जान॥ ३॥
विस्तृत कुल मर्याद युत, गुण विन पूज्य न होय।
शास्त्रनिपुण अकुलीनको, पूजत हैं सब कोय॥ ४॥
सुंदर यौवन सहित हू, उत्तम कुलमें होय।
ढाकपुष्पसम ज्ञान बिन, शोभा लहै न सोय॥ ५॥
रजनी भूषण चंद्रमा, नारि पति भुवि भूप।
विद्याभूषण सबनिको, जो जग रूप कुरूप॥ ६॥
विद्यासे सब होत हैं, धनी और गुणवान।
विन विद्या जे नर रहैं, वे नर पशू समान॥ ७॥
विद्या बंधु विदेशमें, विद्या विपद सहाय।
जो नर विद्यावान है, वह कैसे दुख पाय॥ ८॥
राज भोग धन संपदा, विपद समय तज जांहि।
इक विद्या विपदा समय, तजै न नरकी बांहि॥ ९॥
निरु छिनको सघन लखि, विद्या तजहु न कोय।
वेश्याको धन सहित लखि, सती न कुलटा होय॥ १०॥

छप्पय।

विद्या नरको रूप भूप, आदर सरसावै।
विद्या धन अति गुप्त, आपको आप रखावै॥
विद्या गुरु महान, भोग सुख करत परम हित।
विद्या देश विदेश बीचमें होत मातु पित॥
विद्या इष्ट समान है सदा देह रक्षा करत।
विद्या रत्न विहीन नर, धरतीपै पशु सम चरत॥ ११॥
तातैं कोटि उपाय करि, विद्या पढ़हु सुजान।
उभय लोक यश सुख लहो, होहु सदा गुणखान॥ १२॥

पच्चीसवां पाठ।

गुरु शिष्यका संवाद।

गुरु—क्यों लड़के! तुम सच कहना कि तुमको पतंग (कनकया) उड़ाना कैसा अच्छा मालूम होता है।

शिष्य—गुरुजी महाराज! ऐसा कौनसा लड़का है जिसको पतंगका उड़ाना अच्छा नहिं लगता है? अतएव मुझे ही क्यों? सबको अच्छा लगता है।

गुरु—अच्छा! यह तो बताओ पतंगके उड़ानेमें मुख्य आधार क्या चीज है?

शिष्य—महाराज पतंगमें यद्यपि अच्छा कागज और अच्छी हवाके होनेकी भी अत्यन्त आवश्यकता है परन्तु इन सबके अच्छा होनेपर भी डोरीके विना कुछ भी काम नहीं चल सकता इस कारण पतंगमें मुख्य चीज डोरी मालूम होती है।

गुरु—यदि पतंग अच्छी हवामें बहुत ऊंची चढ़ी हुई हो और

उस समय डोरी टूट जाय तो पतगकी क्या अवस्था होती है।

शिष्य—महाशय! जिस समय डोरा टूट जाती है उस समय पतग अपनी स्वतंत्रताके साथ जिधर तिधर उड़ती है परन्तु अन्तमें जमीनपर पड़कर बहुधा नष्ट हो जाती है।

गुरु—बस! ठीक पतंगकी समान ही बालकोंका स्वभाव (बालकपन) है अर्थात् जब तक बालक अपने माता पिता तथा गुरुजनोंकी आज्ञारूपी डोरीसे बंधे रहते हैं, तब तक तो उनका कल्याण और हित होता है—वे किसी खराब संगतिमें पड़कर नष्ट भ्रष्ट नहिं होने पाते परन्तु जब वे बालक अपने माता पिता वा अन्य गुरुजनोंकी आज्ञारूपी डोरीमेंसे निकल कर स्वच्छंद हो जाते हैं अर्थात् अपनी इच्छानुसार चलने लग जाते हैं और किसी की भी आज्ञा नहिं मानते तब वे खोटी संगतिमें पड़कर अनेक प्रकारसे नष्ट भ्रष्ट होकर बड़े बड़े दुःख उठाते हैं। उस समय फिर पछताना भी बहुत करते हैं परन्तु पछतानेसे कुछ भी काम नहिं चल सकता। इस कारण तुम सबको सावधान होना चाहिये। तुम कभी भी अपने माता पिताओंकी तथा अन्य हितैषी गुरुजनोंकी आज्ञारूपी डोरीसे बाहर नहिं होना।

सब शिष्य—हाथ जोड़ कर हां महाराज! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। हम सब ऐसा ही करेंगे।

छव्वीसवा पाठ।

सदाचारी और असदाचारी बालक।

किसी शहरमें एक धर्मात्मा धनाढ्य महाशयने एक बालबोध स्थापित की थी, उस पाठशालामें एक सदा

द्वारा अध्यापक रक्खा गया था। उस अध्यापकको पाठशाला स्थापन करनेवाले धर्मात्मा सेठने कहा कि इस पाठशालामें दो प्रकारकी कक्षा रखनी होगी अर्थात् एक सदाचारी विद्यार्थियोंकी कक्षा और एक असदाचारी बालकोंकी कक्षा। इस प्रकार आज्ञा होने पर अध्यापक महाशयने पाठशालाका कार्य भार लेकर सब विद्यार्थियोंसे कहा कि इस पाठशालामें दो कक्षा हैं। एक सदाचारी बालकोंकी और दूसरी असदाचारी बालकोंका। अतएव जो लड़का सदाचारी हो वह सदाचारी बालकोंका इस कक्षामें बैठे और जो असदाचारी हो वह इस दूसरी कक्षामें बैठे। यह आज्ञा सुनकर सब विद्यार्थी सदाचारी कक्षामें जा बैठे, असदाचारी कक्षामें एक भी लड़का नहिं बैठा।

तत्पश्चात् अध्यापक महाशयने कहा कि तुम तो सबके सब सदाचारी कक्षामें बैठ गये सो ऐसा नहिं चाहिये। तुममेंसे जो जो लड़के असदाचारी हैं, उनको इस दूरी कक्षामें बैठना चाहिये। तब उन लड़कोंमेंसे सरूपचन्द नामक सुबोध लड़का था वह उठकर अध्यापक महाशयको हाथ जोड़कर विनयके साथ बोला कि—महाशय! सदाचारी लड़के कौन होते हैं और असदाचारी कौन होते हैं, इसका भेद समझावें तो आपकी आज्ञाका पालन हो सकेगा।

अध्यापक—जो लड़का पाप कार्य (बुरे काम) करता है। वह तो असदाचारी और जो पापकार्य न करे वह सदाचारी है।

सरूपचन्द—पाप कार्य कौन २ से हैं, कृपा करके बताइये।

अध्यापक—हिंसा करना, चोरी करना, झूठ बोलना, कुशील सेवन करना, परिग्रहका संग्रह करना, मायाचार (छलकपट)

करना, क्रोध गुस्सा करना, अहंकार या मान (गर्व) करना, जुआ खेलना, मांस खाना, मदिरा (शराब) भंग तमाखू वरस बीडी चुरुट पीना, लडाई झगडा करना, चुगली करना, निंदा करना, किसीसे राग करना, किसीसे द्वेष भाव रखना, देव गुरु शास्त्र तथा बडोंका अविनय करना, इत्यादि पापकार्य हैं। इनको जो नहिं करता, वही सदाचारी बालक है और इनको जो करता है, वही असदाचारी है।

स्वरूपचन्द—महाशय! आपका कहना सब सत्य है परन्तु इन सबका त्याग तो साधु क्षुल्लक तथा दुलीचंदजी सरीखे त्यागी बाबाजी वगेरहसे हो पा सकता है, हम लोगोंसे ऐसा बनना कठिन है।

अध्यापक—यह कहना ठीक है परन्तु श्रावकोंका धर्म एक देश त्याग अर्थात् यथाशक्ति त्याग करना है। सो जिसके करनेसे तुम्हारा या तुम्हारे हितैषियोंका कोई काम ही न बने, ऐसे व्यर्थ ही स्थूल पाप नहिं करने चाहिये तथा इन सबकी कुछ न कुछ मर्यादा (हद) रख कर शेषका त्याग करते रहना चाहिये।

स्वरूपचन्द और सब लडकोंने कहा कि—बहुत ठीक है जहांतक हमसे बनेगा हम ऊपर लिखे पापकार्योंका त्याग करते रहेंगे। कुछ दिनोंके बाद सब लडकोंने यथाशक्ति असदाचरण (पापाचरण) छोडकर सदाचारी कक्षामें प्रवेश किया। जिसको देखकर अध्यापक तथा पाठशाला स्थापन करनेवाले महाशय को बड़ा आनंद हुआ।

सत्ताईसवां पाठ।

स्वरूपचन्द्र।

एक दिन मुरादाबादकी सस्कृत पाठशालामें पडितजी महाराजने समस्त विद्यार्थियोंको पाठ (सबक) देकर हुकुम दिया कि सब जने अपना २ पाठ कठाग्र करो, जो कोई पुस्तककी तरफ न देख कर दूसरी तरफ देखने लग जायगा उसको मैं पीटे विना नहिं रहूं गा।

कुछ समय बाद बन्नूलाल नामका लडका अपनी पुस्तकको देखना छोड खिडकीकी राहसे सडककी तरफ देखने लगा, उसके पास स्वरूपचद्र नामका लडका बैठा था, उसने पडितजी को कह दिया कि "देखो" पडितजी! बन्नूलाल सडककी तरफ देख रहा है।" पडितजीने बन्नूलालकी तरफ देखा तो बन्नूलाल सावधान होकर अपनी पुस्तकको पढने लगा। तब पडितजीने स्वरूपचन्द्रको कहा कि—तुझे कैसे मालूम हुवा कि बन्नूलाल सडककी तरफ देखता था, तब स्वरूपचद्रने कहा कि पडितजी साहब! मैंने अपनी आखोंसे देखा था कि वह सडककी तरफ देख रहा है। मैं क्या आपके सामने झूठ बोलता हू? पडितजीने कहा कि बेशक तू झूठ नहिं बोलता, परतु जिस वक्त तू बन्नूलाल की तरफ देख रहा था, उस वक्त तेरी दृष्टि क्या पुस्तककी तरफ भी थी! क्या तू अपनी पुस्तक देखना छोड बन्नूलालकी तरफ नहिं देखता था? यह बात सुनकर स्वरूपचद शरम गया और गर्दन नीची कर अपनी पुस्तककी तरफ देखने लगा। तब पडितजीने स्वरूपचंद्रकी पीठ पर हाथ फेरकर कहा कि "भाइ! दूसरेका दोष देखनेके लिये अपनेको दोषी नहिं बनाना! क्योंकि

वास्तवमें वही दोषी है जो दूसरोंके दोष देखा करता है। और परके दोष देखनेवालोंको ही सब जन दुष्ट, दुर्जन खल इत्यादि नामोंसे पुकारते हैं। आज तो मैं तुझे माफ करता हूं, परन्तु फिर कभी ऐसा काम नहि करना। अर्थात् अपने तो गुण और दूसरों के अवगुण कदापि प्रगट नहि करना चाहियें।

अट्ठाईसवा पाठ।

नीतिके दोहे।

वैरी वह माता पिता, जो निज सुत न पढ़ाय।
जिमि हंसनिकी पांतिमें बक नहि शोभा पाय॥ १॥
गुन युत सुत एक हि भला, मूरख शतहू न होय।
एक चन्द्र जगतम हरे, तारे हरे न कोय॥ २॥
पांच बरष सुत लाड़कर, दश लगि ताडन सार।
बरष सोलवां लागत ही, करहु मित्र व्यवहार॥ ३॥
लाड़नमें बहु दोष हैं, ताड़न है, गुणखान।
तिह कारण सुत शिष्यको, ताड़ लड़ावन हान॥ ४॥
सुरभि पुष्पयुत एक तरु, सब वन करत सुवास।
त्यों गुनवान सुपूत इक, निजकुल करत प्रकाश॥ ५॥
अग्निसहित तरु एक ही, करत सकल बन दाह।
त्यों कुपूत निज वंशको, नाश करहि छिन माह॥ ६॥
वस्त्राभूषण सहित जड़, सुजन सभा बिच जाय।
जब लगि कछु बोले नहि, तब लगि शोभा पाय॥ ७॥
राजद्वार दुःसमय समर, उत्सव व्यसन मसान।
इनमें जो साथी सदा, प्रकृत बंधु सोई जान॥ ८॥

उनतीसवां पाठ।

जल (पानी)

जलके बिना कोई भी प्राणी नहिं जी सकता। इस कारण जल सबके जीवनका मूल है। वृक्ष, लता, अन्न शाक, घास वगैरह सब जलसे ही उत्पन्न होते हैं। हम बटलोईमें जलको औटाते हैं तो उसमें धूयेंकी माफिक भाफ निकला करती है। ज्यों ज्यों भाफ निकलती है त्यों त्यों बटलोईका जल घटता जाता है। जिस प्रकार अग्निकी उष्णतासे बटलोईका पानी भाफ बन कर उड जाता है उसी प्रकार कटोरीमें जल भर कर धूपमें रखनेसे कटोरीका जल भी भाप होकर उड जाता है। परन्तु वह भाफ बहुत सूक्ष्म होती है। अपने नेत्रोंसे देखनेमें नहिं आती। इसी प्रकार नदी समुद्र तालाब वगैरहका बहुतसा पानी भाप बन २ कर आकाशमें चढ जाता है और आकाशमें जाकर ठंडी हवासे उसके बादल बन जाते हैं। वे ही बादल फिर गर्मीका कारण पाकर गल जानेसे जमीनपर पड जाते हैं, उसीको वर्षा अथवा मेघ कहते हैं। वर्षासे सब जीवोंका हित होता है। वर्षा यदि न होती तो ज्वार, बाजरा, गेहूं, कपास वगैरह कुछ भी नहिं होते, घास भी नहिं होती और कूप तालाब नदी वगैरह भी सूख जाते। बरसातमें जो पानी बरसता है, उससे नदी तालाब कूप वगैरह भर जाते हैं। परन्तु जब पानीमें घास पत्ते वगैरह गिरकर सड जाते हैं तो वह पानी खराब बदबूदार हो जाता है, उसके पीनेसे मनुष्य तथा पशु वगैरह [illegible]रहके रोग उत्पन्न होते हैं, इसलिये जहा तक हो [illegible] तालाब कूप का पानी कदापि,

पीना चाहिये। अगर कहीं पर स्वच्छ जल नहिं मिले तो मल रहित तथा जिसमेंसे सूर्यका प्रतिबिम्ब नहिं दीखे, ऐसे दोहरे कपडेके [illegible] जैसे छानकर और अग्निपर औटाकर काममें लाना चाहिये। अग्निपर औटानेसे जल शुद्ध और निर्मल हो जाता है। इसके सिवाय ऐसा भी साफ जल क्यों न हो उसमें त्रस जीव अवश्य होते हैं, सो ऊपर लिखेहुए छन्नेमें छानकर तो अवश्यही पीना चाहिये। इस प्रकारका शुद्ध जल पीनेसे शरीरकी रक्षा होती है, शरीर अनेक प्रकारके रोगोंसे बचा रहता है।

तीसमा पाठ।

रात्रि भोजन त्याग।

हीरालाल—क्यों मोतीलाल! इतना अच्छा जल्दी कहां जाता है?

मोतीलाल—मैं ब्यालू करनेको जाता [illegible]।

हीरालाल—तो इतना उतावला क्यों भागा जाता है?

मोतीलाल—साफ होनेको भाई, अब जो देर करूंगा तो रात हो जायगी।

हीरालाल—रात हो जायगी तो क्या हानि है?

मोतीलाल—रात्रिमें जीमना नहिं हो सकेगा।

हीरालाल—क्यों रात्रिमें जीमनेसे क्या हर्ज है?

मोतीलाल—अरे हीरा! तू जैनीका लड़का होकर ऐसा क्यों कहता है! तू नहिं जानता कि, जैनीका बालक कभी रातमें नहिं जीमता?

हीरालाल—भाई मोतीलाल! रातमें जीमनेसे क्या हानि होती है? मैं नहिं जानता।

मोतीलाल—भाई, रातमें जीमनेसे अनेक जीवोंका हिंसा होती है जिससे जीवहिंसा नामका पाप लगता है। तू क्या रातमें जीमता है ?

हीरालाल—हां भाई ! मैं तो बहुतवार रात्रिमें ही जीमा करता हूं, फक्त मेरे माता पिता रात्रिमें नहिं जीमते। मुझे तो इसकी छूट है।

मोतीलाल—भाई हीरालाल ! रात्रिमें जीमना बहुत ही हानि कारक है। रात्रिमें जीमनेसे पाप ही लगता है सो नहीं, किंतु कभी कभी जीको बड़ी भारी जोखम भी हो जाती है।

हीरालाल—जोखम कैसे हो जाती है ?

मोतीलाल—रात्रिमें सूरजकी गर्मी नष्ट हो जाने पर अनेक सूक्ष्म (बहुत बारीक) जीव पैदा होते तथा इधर उधर उड़ते फिरते हैं। वे रात्रिमें जीमने वा रसोई वगैरह बनानेसे थालीमें, भोजनमें गिर जाते हैं। उनमें अनेक जीव जहरीले भी होते हैं। अपने पेटमें उनके चले जानेसे अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं तथा कोई २ जीव तो ऐसा होता है कि उससे जहरकासा काम होकर मनुष्य मर भी जाता है। इसलिये जिनेंद्र भगवानकी आज्ञा है, कि किसीको भी रात्रिमें कदापि नहिं जीमना चाहिये।

हीरालाल—बहुत ठीक है। भाई मोतीलाल ! अबसे मैं कभी भी रात्रिमे भोजन नहिं करूंगा। यह तेरा बड़ा उपकार है, जो रास्ते चलते चलते ही ऐसी ज्ञानकी बात मुझे समझा दी।

इकतीसवां पाठ

जलगालन वा जलजंतु

है ~ बिलास बिना छने जलमें जिसे लोग

उनमें लाखों जीव रहते हैं और वे सबके सब जलके साथ पेटमें चले जाते हैं। जिससे केवल हिंसा ही नहीं होती है बल्कि वे जीव शरीरको अनेक प्रकारकी हानि पहुचाते हैं अर्थात् रोग पैदा करते हैं। ये जीव इतने छोटे होते हैं कि—सिवाय सूक्ष्मदर्शक यन्त्रके (जिसको अंगरेजीमें माइस्कोप कहते हैं) आखों से नहिं दीखते। जलको कोयले और फिटकरी आदिसे कितना ही शुद्ध क्यों न किया जाय परन्तु उसमें जीव अवश्य पाये जायगें। हां! जिसमेंसे सूरजका प्रतिबिंब नहिं दीखे ऐसे ग्रंथि रहित दोहरे मोटे कपड़ेके छन्नेसे (गालनेसे) छाननेपर प्राय बहुतसे जीव निकल आते हैं। इसीकारण ही हमारे आचार्योंने श्रावकाचारोंमें ऐसे छन्नेसे छानकर जलपान करनेकी विधि लिखी है। इस कारण हमलोगोंको बिना छना जल किसीभी काममें नहिं लाना चाहिये। जब तुमको पानी पीना हो, उसी वक्त ऊपर लिखे हुये दोहरे छन्नेसे छानकर पिया करो, क्योंकि दो मुहूर्तके पश्चात् अर्थात् १॥ घण्टेके पश्चात् फिर भी छने हुए पानीमें जीव उत्पन्न हो जाते हैं। जैनीके बाहरी मुख्य चिह्न (पहिचान) तीन हैं—एक तो प्रत्येक जीवपर दया रखना, दूसरे पानी छानकर पीना और तीसरे रातमें भोजन नहिं करना; अतएव इन तीनों चिह्नोंको सदैव धारण किये रहो।

बत्तीसवां पाठ।

मेंडक और बैल।

एक छोटेसे तालाबके किनारे दो बैल परस्पर लड़ने लगे। उस तालाबमें बहुतसे मेंढक थे, उनमेंसे एक मेंढकने माथा उठा

कर दूसरे मेढकसे कहा कि, भाई ये बैल तो आपसमें लडने लगे, अब क्या करें, अपना क्या हाल होगा ? यह सुनकर दूसरे मेढक ने कहा कि ये बैल लडते हैं तो लडने दो, हम मेढक जलजतु हैं और ये हैं बल, इनसे हमारा क्या सबंध ? जो इनकी लडाईकी चिंता करें या डर करें। तब पहिले मेढकने कहा कि, भाई तेरा कहना ठीक है, अपना सबंध तो इनसे कुछ नहीं है परंतु ये लडते २ इस छोटेसे तालाबमें आ पडें तो अपना क्या हाल होगा ? इतना बोलते बोलते ही एक बैलने दूसरे बैलको धक्का लगाया तो वह तालाबमें आपडा और उसके सपाटेमें वह दूसरा मेढक भी आ गया और घबरायासा होकर बडी मुशकिलसे उसने अपने प्राण बचाये। पहिला मेढक बोला कि देखा भाई, तूने कहा था कि हमारा इससे क्या सबंध है, जो चिंता करें ? अब तो प्रत्यक्ष फल देख लिया ? भाई जहां लडाइ हो उसके पास भी खडा रहना नहिं चाहिये। परस्पर कलहसे ही हानि होती हो, सो नहीं है किंतु कलह करनेवालोंके पास खडे रहनेसे भी हानि होती है। इस कारण हे बालको ! तुम परस्पर कलह (लडाई) कदापि न किया करो और अन्य किसीमें कलह होता हो तो तुम उसके पास खडे भी न रहो। यदि खडे रहोगे तो तुम्हारे पर दुश्मन अपराध लगा देंगे अथवा सरकारमें गवाही देनेके लिये तो अवश्य ही दो चार बार कचहरी जाना पडेगा।

तेतीसवां पाठ।

याद रखने लायक १० नियम।

१। काम जितना हो सके, उतना अच्छा ही करना

चाहिये। बुरा काम कदापि नहिं करना चाहिये। इसप्रकार करते रहनेसे पापबंध नहिं होगा।

२। जो काम करनेसे आज हो सकता है, उसको कल पर कदापि नहिं छोडना चाहिये, इसप्रकार करनेसे कोई भी काम पड़ा नहिं रहेगा।

३। जो काम स्वयं कर सकते हो, उसे करनेके लिये दूसरेको नहिं कहना चाहिये। इसप्रकार करनेसे तुम पराधीन नहिं रहोगे।

४। हाथमें पैसा आनेसे पहिले ही खर्च करनेका विचार अपने मनमें कदापि मत आने दो। इसप्रकार करनेसे तुम किसीके कर्जदार नहिं बनोगे।

५। कोई चाज कितनी ही सस्ती क्यों न मिले परन्तु जो अपने काम नहिं आवे, उसको कदापि नहिं खरीदना चाहिये। इसप्रकार करनेसे कभी व्यर्थव्यय नहिं होने पावेगा।

६। कभी किसीके सामने गर्व नहिं करोगे तो तुम्हारा अप मान कभी नहिं होगा।

७। भूखसे अधिक कभी नहिं खाना चाहिये किंतु भूखसे कुछ कुछ कम ही खाना चाहिये। इसप्रकार करनेसे कभी रोगी होनेपर पश्चात्ताप नहिं करोगे।

८। जो कुछ करना हो वह संतोष और शांतिके साथ करना चाहिये। इससे व्यर्थ ही आको दुःख नहिं हो सकता।

९। क्रोधके आवेशमें आकर चाहे जो काम कदापि न कर डालना। इसप्रकार विचार करनेसे फिर कभी भी अपनेको बुरा लगनेका प्रसंग नहिं आवेगा।

१०। जो कुछ सुख दुःख होता है, वह अपने ही किये हुये कर्मानुसार (पाप पुण्यके अनुसार) होता है; सो अपनेको ही भोगना पड़ेगा, ऐसा हमेशह अपने चित्तमें याद रखकर सब काम करते रहना चाहिये। इसप्रकार करनेसे निराकुलताकी (सुखकी) कमी न रहेगी।

चौंतीसवां पाठ।

नीतिके दोहे।

नहीं न नृप श्रोत्रिय सरित, और वैद्य धनवान।
वास करै नहिं एक छिन, पंडित जन तिहिं थान॥ १॥
आदर नहिं जिहिं देशमें, बन्धु, वृत्ति, नहिं होय।
नहिं विद्याको आगमन, तहां न वसिये कोय॥ २॥
मनके चिंते कार्यको, प्रगट करो मत कोय।
प्रगट कियेतें कार्य वह, सिद्ध न कबहू होय॥ ३॥
कुनदि कुदेश कुजीविका, अवर कुद्रव्य कुनार।
निंदित भोजन पान पुन, तजहु नित्य सविचार॥ ४॥
ऋण व्याधी अरु अग्निका, शेष न राखहु लेश।
ये तीनों शेषहिं रहे, क्रम क्रम बढ़त हमेश॥ ५॥
सुत नारी सेवक सदा, जा नरके वश होय।
सपत्तिमें सतोष पुनि, स्वर्ग यहीं पर सोय॥ ६॥
दुष्टा नारी मित्र शठ, उत्तरदाता भृत्य।
सर्पयुक्त गृहवास पुनि, मृत्यु हेतु ये सत्य॥ ७॥
कोकिल रूप जु मधुर स्वर, पतिसेवा तिय जान।

पैंतीसवां पाठ।

अजीवके भेद (गुरुशिष्य प्रश्नोत्तर)

शिष्य—गुरुजी, उस दिन अजीवका लक्षण तो आपने बताया था परन्तु अजीवके भेद नहिं बताये, कृपा करके आज अजीवके भेद बताइये।

गुरु—अजीव पांच प्रकारके होते हैं। जैसे, पुद्गल १ धर्म २ अधर्म ३ काल ४ और आकाश ५।

शिष्य—पुद्गल किसको कहते हैं?

गुरु—स्पर्श, रस (स्वाद), गंध और वर्ण (रूप या रंग) ये चार गुण जिसमें पाये जांय। ये चार गुण पुद्गलमें सदा ही पाये जाते हैं। ये गुण पुद्गलको छोड़कर और किसी भी द्रव्यमें नहिं रहते। ये चारों ही गुण सदा साथ रहते हैं, जैसे—पके हुये आममें कोमल स्पर्श है, मीठा रस है, अच्छी गंध है और पीला वर्ण अर्थात् रूप या रंग है।

शिष्य—पुद्गल कितने प्रकारके हैं?

गुरु—पुद्गल अनेक प्रकारके हैं परन्तु मुख्य भेद दो हैं, एक परमाणु और दूसरा स्कंध।

शिष्य—परमाणु किस कहते हैं?

गुरु—पुद्गलके सबसे छोटे टुकड़ेको परमाणु कहते हैं, जिसका फिर कोई दूसरा टुकड़ा नहिं हो सके।

शिष्य—स्कंध किसको कहते हैं?

गुरु—अनेक परमाणुओंके मिले हुये एक समूहको (पिंड या डेलेको) स्कंध कहते हैं। धूप, छाया, अंधेरा, चांदनी, लकड़ी, पत्थर वगैरह सब पुद्गलके स्कंध या पर्याय हैं।

शिष्य—स्पर्श किसको कहते हैं और वह कितने प्रकारका है?

गुरु—स्पर्श उसे कहते हैं जो स्पर्शन इन्द्रियसे यानी छूनेसे जाना जाय। वह स्पर्श आठ प्रकारका होता है—स्निग्ध (चिकना) १, रूक्ष (रूखा) २, शीत (ठंडा) ३, उष्ण (गर्म) ४, मृदु (कोमल, नरम) ५, कर्कश (कठोर, कड़ा) ६, गुरु (भारी) ७ और लघु (हलका) ८। जैसे घीमें स्निग्ध, बालूमें रूक्ष, पानीमें शीत, अग्निमें उष्ण, मक्खनमें मृदु, पत्थरमें कर्कश, लोहेमें गुरु, और रूईमें लघु स्पर्श है।

शिष्य—रस किसको कहते हैं और वह कितने प्रकारका है?

गुरु—रस उसे कहते हैं जो रसना (जिह्वा) इन्द्रियसे जाना जाय। रस पांच प्रकारका होता है—तिक्त (तीता या चर्परा) १, कटु (कड़ुआ) २, कषाय (कषैला) ३, आम्ल (खट्टा) ४, और मधुर (मीठा) ५। जैसे-मिरचमें तीखा, नीममें कटु, आमलेमें कसैला, नीबूमें खट्टा और गुड़ या चीनीमें मीठा रस है।

शिष्य—गंध किसे कहते हैं और वह कितने प्रकारकी है?

गुरु—गंध उसे कहते हैं जो घ्राण (नासिका) इन्द्रियसे जानी जाय। गंध दो प्रकारकी होती है—एक सुगंध (खुशबू) दूसरी दुर्गंध (बदबू)। जैसे—गुलाबके फूलमें सुगंध और मट्टी के (किरासीन) तेलमें दुर्गंध होती है।

शिष्य—वर्ण किसको कहते हैं और वह कितने प्रकारका है।

गुरु—वर्ण (रूप या रंग) उसे कहते हैं जो नेत्र इन्द्रियसे जाना जाय। वर्ण पांच प्रकारका होता है। कृष्ण (काला) १, नील २, रक्त (लाल) ३, पीत (पीला) ४ और श्वेत (सफेद)

५, जैसे कोयलेमें काला, नीलमें नीला, सिंदूर या शीशेमें लाल सोनेमें पीला और दूधमें श्वेतवर्ण है ।

शिष्य—तब तो गुरुजी ! स्पर्श आठ, रस पांच, गंध दो और वर्ण पांच, सब मिलाकर पुद्गलके २० गुण हो गये ।

गुरु—हां ! पुद्गलके कुल गुण बीस होते हैं ।

शिष्य—अच्छा, गुरुजी ! धर्म नामक अजीव पदार्थ किसे कहते हैं ?

गुरु—धर्म उसे कहते हैं जो जीव और पुद्गलोंको चलनेमें सहकारी हो अर्थात् मदद देता हो । जैसे—जल मछलीको चलनेमें सहकारी है । यह धर्म पदार्थ तमाम लोकमें फैला हुआ एक ही, अखंड और सूक्ष्म (जो अपनी आंखोंसे देखनेमें नहिं आता) पदार्थ है ।

शिष्य—अधर्म नामक अजीव पदार्थ किसे कहते हैं ?

गुरु—अधर्म उसे कहते हैं जो जीव और पुद्गलोंके ठहरनेमें सहकारी हो । जैसे—पेडकी छाया थके हुये मुसाफिरोंको ठहरनेमें सहकारी है । यह अधर्मद्रव्य भी धर्मद्रव्यकी तरह सर्व लोकमें व्याप्त (फैला हुवा) एक ही अखंड और सूक्ष्म पदार्थ है ।

शिष्य—धर्म और अधर्म द्रव्य जीव और पुद्गलोंको क्या जबरदस्ती चलाते या ठहराते हैं ?

गुरु—ये जबरदस्ती चलाते ठहराते नहिं हैं किंतु जीव पुद्गल जब स्वयं चलते या ठहरते हैं तब ही उदासीनतासे चलाने या ठहरानेमें सहायक होते हैं । परन्तु यह ध्यानमें रखना चाहिये कि—धर्मद्रव्य लोकमें न होता तो सब पदार्थ एक ही जगह पडे रहते और अधर्मद्रव्य न होता तो सब पदार्थ उडे उडे फिरते । यहां धर्म अधर्म शब्दसे साधारण धर्म अधर्म नहिं समझ लेन

जिनका अर्थ पुण्य पाप वा मोक्षका ले जानेवाला रत्नत्रय धर्म है।'

शिष्य–कालद्रव्य किसे कहते हैं तथा वह कितने प्रकारका है।

गुरु—कालद्रव्य उसे कहते हैं जो समस्त द्रव्योंकी पर्याय (हालतें) बदलनेमें सहकारी हो। कालद्रव्य निश्चयकाल और व्यवहारकालके भेदसे दो प्रकारका है।

शिष्य– निश्चयकाल किसे कहते हैं?

गुरु—लोकाकाशके प्रत्येक प्रदेशमें निश्चयकालका एक एक अणु घड़ेमें पाजेरैकी तरह भरा हुआ है ये कालाणु असंख्यात है और सूक्ष्म हैं जो नेत्रोंसे नहिं दीखते हैं।

शिष्य—व्यवहारकाल किसे कहते हैं?

गुरु—ऊपर बताये हुए निश्चय कालद्रव्यकी पर्यायको व्यवहारकाल कहते हैं। जैसे पल, घड़ी पहर दिन सप्ताह (हफ्ता) पक्ष (पखवाड़ा) मास वर्ष वगैरह।

शिष्य—आकाश किसे कहते हैं और वह कितने प्रकारका है।

गुरु—आकाश उसे कहते हैं जो समस्त पदार्थोंको अवकाश (स्थान) दें अर्थात् वह वह पदार्थ है जिसमें समस्त द्रव्य रहते हैं। वह आकाश सर्वव्यापी एक ही अखंड पदार्थ है परन्तु लोकाकाश और अलोकाकाशके भेदसे दो प्रकारका कहलाता है।

शिष्य—लोकाकाश और अलोकाकाश किसे कहते हैं।

गुरु—आकाशमें जहां तक जीव पुद्गल धर्म अधर्म और काल ये पांच द्रव्य रहते हैं उतने आकाशको तो लोकाकाश कहते हैं और लोकाकाशके बाहर चारों तरफ जो खाली जगह है उसे अलोकाकाश कहते हैं।

शिष्य—गुरुजी ! प्रदेश किसे कहते हैं ?

गुरु—आकाशके सबसे छोटे टुकडेको प्रदेश कहते हैं।

शिष्य—इन पांचों द्रव्योंके विषयमें और भी कुछ विशेष जानना है परन्तु फिर कभी पूछूंगा। इस समय अक्ल काम नहीं देता ।

गुरु—बहुत ठीक ! यह बहुत सूक्ष्म चर्चा है, फिर कभी सम झना ।

छत्तीसवां पाठ ।

प्रत्युपकार ।

एक सिंह गर्मीके दिनोंमें वृक्षकी छायामें सो रहा था। उसके शरीर परसे अनेक चूहे इधरसे उधर आ रहे थे। इतनेमें सिंह जाग उठा, तब उसने एक चूहेको पकड लिया। चूहेने अतिशय दीनताके साथ प्रार्थना की कि हुजूर ! मैं बहुत क्षुद्र जंतु हूं मेरा यह अपराध क्षमा कीजिये। सिंहको दया आ गई, और उसने चूहेको छोड दिया। चूहेने जाते समय यह कहा कि आप कभी दु:खमें पड़ेंगे, तो मैं भी आपका दुःख टालूंगा, क्योंकि आपने मुझे जीवनदान दिया है, सिंहने हसकर मन ही मन कहा कि, इस छोटेसे जीवको कितना घमंड है ? भला ! यह मेरा दुख क्या टालेगा, इस विचारेको मेरे सामर्थ्यका ज्ञान नहीं है कि मैं समस्त वनका राजा हूं ।

एक समय ऐसा संयोग बना कि उसी वृक्षके नीचे किसी शिकारीने सिंहको फसाकर मार डालनेके लिये जाल डाल दिया सिंह सदाकी तरह वहां आया, और आते ही जालमें फंस गया।

उस जालसे छूटनेके लिये ज्यों ज्यों वह जोर करता था त्यों त्यों उस जालमें अच्छी तरह जकडता जाता था। जिससे चारों पाव हिलानेमें असमर्थ होकर उसने जानेकी आशा छोड दी और बडे जोरसे चिल्लाने लगा। तब उसका शब्द सुनकर वही चूहा वहां पर दौडा हुआ आया और अपने जीवनदाता सिंहको महा कष्टमें पडा देखकर उसने मनमें विचारा कि उस दिनके मेरे जीवदानका बदला देनेका यही अवसर है। तब सिंहसे कहा कि महाराज! घबडाइये नहीं आपका दास हाजिर हो गया है। इससे जो कुछ सेवा बनेगी करेगा। फिर उसने वह जाल अपने दांतोंसे काटकर सिंहको छुडा दिया।

सिंहने मन ही मन विचार किया कि उस दिन मैं इस चूहेकी बात पर हसा था, परन्तु अब मेरे ध्यानमें आया कि समय पर तिनका भी काममें आता है।

इस कहानी परसे यही शिक्षा लेनी चाहिये कि दुनियामें किसीको छोटा नहि समझना। समय पर सब ही काम आते हैं। इसके सिवाय अपने साथ किसीने उपकार किया हो तो उसको कदापि नहि भूलना चाहिये और दुखके समय यथाशक्ति तन मन धनसे उस उपकारीकी सहायता कर उसका दुख दूर करनेमें तत्पर रहना चाहिये।

सैतीसवां पाठ।

काच।

ऐसा कोई भो लडका नहि होगा जिसने काच नहि देखा हो। काच कठिन पदार्थ है और उसमेंसे आरपार दीखता है। कोइ २

काच इतना स्वच्छ (निर्मल) होता है कि—उसकी दूसरी तरफके पदार्थ तो दीखते हैं परन्तु यह काचमें पड़ा है सो नहिं दीखता। ऐसे आरपार जिस पदार्थमें दीखता हो, उसे पारदर्शक पदार्थ कहते हैं। काच, पानी, हवा, बरफ, स्फटिक, हीरा वगैरह अनेक पदार्थ पारदर्शक होते हैं। जिनमेंसे आरपार नहिं दीखता हो उनको अपारदर्शक पदार्थ कहते हैं।

काच अनेक प्रकारका होता है उसके तैयार करनेमें भी अनेक प्रकारके पदार्थ लगते हैं, साधारण मुह देखनेका काच एक प्रकारका है। रंग जिसमें काच दूसरी तरहके होते हैं। बिल्लौरी काच दूसरी तरहका होता है। झाड फानुस वगैरह बनानेका काच भी भिन्न प्रकारका है।

इन अनेक प्रकारके काच बनानेमें अनेक प्रकारके मशाले लगते हैं परन्तु सब तरहके काचोंमें एक पदार्थ अवश्य ही होता है। उसके बिना कोई भी काच तैयार करनेमें नहिं आ सकता। उस पदार्थको अंगरेजीमें सिलिका कहते हैं यह एक प्रकारका सफेद चमकदार मिट्टी सरीखा पत्थर होता है। इस सिलिकामें कम या जियादा पदार्थ मिलाकर गर्म करनेसे काचका रस तैयार होता है। उससे सब तरहके पदार्थ ढाल लेते हैं। उत्तम काच बनानेमें सीसा भी काममें लाया जाता है।

काचके पदार्थ तैयार करनेपर उसको एकबार आग पर खूब तपाना पड़ता है और धीरे २ फिर उनको ठंडा करते हैं। यदि ऐसा नहिं किया जाय तो वे काचके पदार्थ काममें नहीं आते अर्थात् काममें लाते ही पटापट तड़क जाते हैं। दीपक पर लगानेकी कोई कोई चीमनी जरासी आंच लगते तड़क जाती है।

यदि उसको एक वर्तनमें पानी डालकर खूब गर्म करके उबाल लिया जाय तो वह चिमनी आचसे कदापि नहिं तडकेगी।

घडिया, हांडी, ग्लास, भाड, आरसे, चिमनी, वगैरह पदार्थ काचके बनते हैं। ये पदार्थ एकबार फूट जाते हैं तो फिर जुडते नहीं हैं। काच अत्यत तडकनेवाला अर्थात् शीघ्रही फूट जाने वाला पदार्थ है। परतु उसके भीतर से आरपार दीखता है और काचके वर्तनमें कोई पदार्थ रक्खा जाय तो वर्तनका कोई दोष उसमें नहिं आता इसके सिवाय काचके पदार्थ बडे सुदर दीखते हैं, इसी लोभसे अनेक लोग काचके वर्तन भाड फानुस लैंपें खिलोने वगैरह रखते हैं और प्रति वर्ष लाखों रुपये व्यर्थ ही खर्च करते रहते हैं जिससे देश दिन २ दरिद्र होता जाता है। यदि कोई भी मनुष्य काचके पदार्थ न लेकर अपने पुरखाओंके अनुसार पीतलके पीलसोत वगैरह तथा अबरखकी चिमनी कागजके फानुसोंमें दीपक चिराग जलाया करें तो लाखों रुपये बच सकते हैं।

अडतीसवां पाठ।

नीतिके दोहे।

वंशदोषतें कृपण है, कर्मदोष धनहार।
मातृदोषतें रुग्णता, पितृदोष अज्ञान॥ १॥
चल भोजन अरु दान–रति, भोज्य विभव वरनार।
ये अति तप विन पुरुषको, मिलै न वारवार॥ २॥
सांच वचन सुखकर सुमन, मनचाही वर नार।
प्रिय [illegible] सुत, ये दुर्लभ जग चार॥

शैल शैलमें मणि नहीं, मुक्ता गज गज मांहि।
वन वन मलयागर नहीं, सब जग साधू नाहि॥
पंडित जाके मित्र अरु, सहवासी कुलवान।
जातिमान्य जो होय सो, दुखी न होय निदान॥५॥
पराधीनता कष्टकर, कष्ट निराश्रय वास।
धनविन वाणिज कष्टकर, दारिद कष्टनिवास॥६॥
दुर्बलको बल नृपति है, शिशुगणको बल रुद।
मूढनको बल मौन है, चौरलको बल झूठ॥७॥

उनचालीसवां पाठ।

परिश्रम।

शरीरको निरोग रखनेके लिये दैहिक परिश्रमकी अतिश आवश्यकता है। क्योंकि परिश्रम करनेसे शरीरमें अतिश ताकत आता है, भूख बढती है और भूखके समय आहार करने शरीरका रक्त (खून) बहुत बढता है। परिश्रमी लोग कम दुर्बल नहिं होते, और न कभी किसी काममें उत्साहहीन ही हो हैं। परिश्रम करनेवालोंका शरीर अतिशय बलवान और पुष्ट हो जाता है। यही कारण है कि परिश्रम करनेवाले किसान आदि अतिशय बलिष्ठ रहते हैं। जिसप्रकार शारीरिक परिश्रम करने शरीर सबल और पुष्ट होता है, उसीप्रकार शरीरके जिस अंग अधिक परिश्रम किया जाता है, वही अंग अन्यान्य अंगोंकी अपेक्षा अधिक बलिष्ठ हो जाता है। जिन्हें हमेशा चलना फिरना पडता है वे जितना चल सकते हैं, उनकी बराबर जो कभी कभी चलते फिरते हैं वे कदापि नहिं चल सकते क्योंकि उनके

अधिक चलने फिरनेसे दोनों पाव अधिक बलिष्ठ हो जाते हैं। इसप्रकार परिश्रमके अनुसार किसीके हाथोंमें किसीके पावोंमें किसीके कधोंमें अतिशय बल होता है अतएव सबको उचित है कि जिनसे समस्त अग उपागोंका हलन चलन होता रहे ऐसे कार्य हमेशह किया करें।

यद्यपि आजकल धनोपार्जनके लिये जो कुछ कार्य किये जाते है, उन सबमें ही प्राय शारीरिक परिश्रम होता है परतु उनमें परिश्रमकी अधिकता पर ध्यान नहिं रक्खा जाता, यह अच्छा नहीं है। क्योंकि जिसप्रकार शारीरिक परिश्रमके अभावसे शरीर नष्ट हो जाता है उसीप्रकार अधिक परिश्रम करनेसे भी शरीर नष्ट हो जाता है, जब शरीरमें शिथिलता आने लगे और कमजोरी पडने लगे, तब जानना चाहिये कि परिश्रम बहुत किया जाता है। उससमय चाहिये कि सावधानीसे काम किया करें।

आजकल बहुधा देखनेमें आता है कि धनवान लोग जितने अधिक रोगी रहते हैं, उतने सदा परिश्रम करनेवाले गरीबलोग नहिं रहते। इसका यही कारण है कि धनाढ्यलोग शारीरिक परिश्रम बहुत कम करते हैं। चाहे राजा हो चाहे रक, शारीरिक परिश्रम किये बिना किसीका भी शरीर नीरोग नहिं रह सकता। इस कारण धनवानोंको चाहिये कि व्यायाम (कसरत) सर्वदा किया करें। व्यायाम करनेसे प्राय समस्त शरीरमें हलन चलन क्रिया होती है, जिससे शरीर हृष्टपुष्ट बना रहता है। स्कूलके विद्यार्थियोंमेंसे कोई २ विद्यार्थी अपने पढने लिखनेमें इतने लव-लीन रहते हैं, कि वे अपने शारीरिक परिश्रम करनेके लिये कुछ भी ... लोग पढनेके बाद जब गृहस्थावस्थामें प्रवेश

करते हैं, तब इतने क्षीण हो जाते हैं कि उनका जीवन भाररूप हो जाता है, अतएव ऐसा अन्याय कदापि नहिं करना चाहिये। समस्त लड़कों व युवकोंको चाहिये कि व्यायाम सदैव किया करें। व्यायामसे केवल मात्र शरीर निरोग ही रहता है, ऐसा नहिं है; किन्तु साथ ही साथ यह अतिशय बलिष्ठ और पुष्ट हो जाता है जिससे कि, विद्याभ्यास भी अच्छा होता है। जो लड़के व्यायाम करके अपने शरीरको हृष्ट पुष्ट बनाये रखते हैं, वे ही विद्या, धन, मान, प्रतिष्ठा पाकर देशके भूषण होते हैं। इसलिये हे बालको! तुम सदैव कसरत किया करो। यदि तुम्हें कसरत करनेके लिये अखाड़े आदिका संयोग नहिं मिले, तो शाम सवेरे दोनों वक्त साफ जंगल या उपवनकी (बागकी) हवा खानेके लिये मील दो मील तो अवश्य [illegible] जाया करो।

चालीसवा पाठ

आठ कर्म।

शिष्य—गुरुजी महाराज! हमने सुना है कि—कर्मकी गति विचित्र है। कर्म जो करता है, वैसा कोई नहीं कर सकता सो कर्म क्या चीज है इसको समझा दें तो बड़ा कृपा हो।

गुरु—भाई यह विषय कठिन है परन्तु तुम्हें सरलतासे बताता हू। ध्यान देकर सुनो। यह तो तुम जानते ही होगे कि जीव पांचप्रकारके हैं—एकेंद्रिय, बेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चौइंद्रिय, पंचेंद्रिय। सो ये जीव हमेशाह किसी न किसी गतिमें किसी न किसी शरीरमें रहते हैं, बिना शरीरके जीव एक मिनिट भी नहिं रहता

गां यह शरीर भी एक प्रकारका कर्म है। इस शरीरके साथ और अनन्त कर्म इस जीवके साथ अनादिकालसे लगे हुये हैं। जिस जिस शरीरमें यह जीव आता है, कर्म साथ लगे रहते हैं और नानाप्रकारके सुख दु ख देते हैं। वे सब कर्म आठ प्रकारके हैं।

शिष्य—इन आठ कर्मोंके नाम क्या हैं सो बताइये।

गुरु—ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय मोहनीय अन्तराय वेदनीय आयु नाम और गोत्र ये आठ कर्म हैं।

शिष्य—इनमेंसे ज्ञानावरणीय कर्म जीवको क्या दुख देता है?

गुरु—जीवमें ज्ञान गुण जिनेंद्र भगवानके समान केवलज्ञान (सर्वज्ञता) तकका है परन्तु इस ज्ञानावरणीय कर्म ने समस्त ज्ञानको (सूरजको बादलकी तरह) ढक रखा है। थोड़ा बहुत ज्ञान गुण प्रगट है इसीसे अपन लोग जानते पढते लिखते रहते हैं। कोई जीव तो बड़ा पंडित होता है कोई मूरख रहता है सो यह इस ज्ञानावरणीय कर्मका ही फल है। जिस जिसके ज्ञानावरणीय कर्म अधिक कम हो जाता है उसके ज्ञान भी अधिक होता है। जिसके ज्ञानावरणीय कर्म कम नहिं होता उसको ज्ञान थोड़ा होता है।

शिष्य—और दर्शनावरणीय कर्म किसको कहते हैं।

गुरु—दर्शनावरणीय कर्म इस जीवके देखनेके गुणको घात करता है। अपनेको निद्रा आती है सो यह दर्शनावरणीय कर्मके उदयसे ही आती है। अर्थात् दर्शनावरणीय कर्म जब जोर करके जीवको अपना फल दिखाता है तो जीवको कई तरहकी निद्रा आती है।

शिष्य—मोहनीय कर्म क्या करता है ?

गुरु—मोहनीय कर्म इस जीवको अज्ञानी करता है त
औरका और विश्वास करा देता है। क्रोध मान माया लोभ वगैरा
जो कषाय जीवके होते हैं वे सब मोहनीय कर्मका ही
काम है।

शिष्य—अंतराय कर्म क्या करता है ?

गुरु—अंतराय कर्म इस जीवके दान लाभ भोग उपभोग
और बल इन पांचोंके होनेमें विघ्न डालता है अर्थात् दान नहिं
होने देता, दान करना हो तो उसमें अंतराय डाल देता है।
धनकी प्राप्ति, भोग उपभोग नहिं होने देता, शरीरमें ताकत नहिं
होने देता है।

शिष्य—और वेदनीय कर्म क्या करता है।

गुरु—वेदनीय कर्म इस जीवको अनेक प्रकारके सुख और
दुख करता है। जो सुख करता है उसको सातावेदनीय कहते हैं।
जो दुःख करता है उसको असातावेदनीय कहते हैं। इसप्रकार
वेदनीय कर्म दो प्रकारका होता है।

शिष्य—आयुकर्मका क्या काम है ?

गुरु—आयुकर्म जीवको शरीरमें अटका रखता है अर्थात्
उमर देता है। जितने दिन या जितने वर्षकी आयु होगी उतने
ही दिन या उतने ही वर्षतक यह जीव एक शरीरमें रह सकता
है। जिस समय आयुकर्म पूरा होजाता है उसी समय यह
जीव इस शरीरको छोडकर दूसरे शरीरको धारण कर लेता है।

शिष्य—नामकर्म किसको कहते हैं।

गुरु—नामकर्म शरीर, इंद्रियां, हड्डियोंकी मजबूती सुन्द

रा, असुन्दरता आदि देता है। नाम कर्म ९३ प्रकारका है सो ९३ प्रकारका जुदा जुदा फल देना

शिष्य—और गोत्र कर्मका क्या काम है।

गुरु—गोत्र कर्म इस जीवको ऊंचे और नीचे कुलमें पैदा करता है। अगर नीच गोत्रकर्मका उदय होता तो अपन भंगी, चमार, कसार, वगैरह नीच जातिमें पैदा होते परन्तु हमारे उच्च गोत्रका उदय होनेसे हमने उत्तम वैश्यकुलमें तथा उसमें भी जैन श्रावक कुलमें जन्म लिया है।

शिष्य—इन कर्मोंके भेद भी बहुत हैं।

गुरु—भेद तो अनेक हैं परन्तु सब मिलाकर बड़े बड़े भेद १४८ हैं। ज्ञानावरणीय पांच प्रकारका है। दर्शनावरणीय नौ प्रकारका है। मोहनीय कर्म अट्ठाइस प्रकारका है। अन्तराय कर्म पांच प्रकारका है। वेदनीय कर्म दो प्रकारका है। आयु कर्म चार प्रकारका है। नाम कर्म तिरानवे प्रकारका है और गोत्र कर्म दो प्रकारका है। इस तरह सब मिलाकर १४८ तरहका है।

शिष्य—इनका जुदा जुदा भेद नहिं बता सकते ?

गुरु—बता तो सकते हैं परन्तु अभी तुम्हारा समझमें नहि आवेगा, जब इसका तीसरा या चौथा भाग पढ़ोगे तो समझमें आजायगा।

इकतालीसवां पाठ।

बाघ और बकरीका बच्चा।

एक नालेपर एक बाघ पानी पी रहा था। वहां पर एक बक

रीका बच्चा भी पानी पीनेको आया सो दूसरे बाघको देखकर डरा और नालेके नीचेकी तरफ बहुत दूर जाकर पानी पी लगा। उसको बाघने देखा तो उसके मनमें आया कि इस बकरीके बच्चेको मारकर खाना चाहिये। परन्तु उसे अपराधी ठहराकर मारना चाहिये, ऐसा विचार करके यह बाघ बकरीके बच्चेके पास गया और उससे बोला कि—क्यों रे! तू देखता नहीं कि इधर हम पानी पी रहे हैं तू पानी गदला किये देता है! तब बकरीका बच्चा घबडाकर हाथ जोड़के बोला कि-हुजूर आप तो ऊपरकी तरफ पानी पी रहे थे और मैं नीचेकी तरफ पी रहा हूं, आपका पीया हुआ पानी मेरी तरफ आता है मेरा तरफका पानी ऊपरकी तरफ कैसे जा सकता है!

तब बाघ निरुत्तर होकर थोड़ी देर सोच कर दूसरा दोष लगानेके लिये बोला कि—तू एक वर्ष पहले मुझे गालियां देता था और मेरी निंदा करता था। तब बकरीका बच्चा बोला कि—हुजूर मुझे पैदा हुये तो अभी चार महीने भी पूरे नहिं हुए, एक वर्ष पहिले मैं आपको गाली किस प्रकार दे सकता था।

जब इस बार भी बाघ निरुत्तर होगया तो उसे बड़ा क्रोध आया और बोला कि एक वर्ष पहिले तू नहीं था तो तेरा पिता अथवा चचा होगा। ऐसा कहकर उस बेकसूर बकरीके बच्चेको मार डाला और खा गया।

इस कहानीका अभिप्राय यह है कि—जबरदस्तके सामने न्याय वचन या सियानपन नहिं चल सकता। यदि दुष्ट मनुष्योंके साथ ऐसा अवसर आन पड़े तो चुप रहनेके सिवाय और कोई उपाय नहीं है।

६० साठ मिनटका	एक घंटा।
२४ चौबीस घंटेका	एक दिन (रातके १२ बजेसे रातके बारह बजे तक)
७ सात दिनका	एक हफ्ता या एक सप्ताह।
४ हफ्तेका तीस दिनका	एक महीना या एक मास।
१२ बारह महीनेका	एक वर्ष।
५२ हफ्तेका	एक वर्ष।
३६५ तीनसौ पैंसठ दिनका	एक वर्ष।

एक हफ्तेमें सात वार

१ रविवार (अदीतवार व इतवार) २ सोमवार (चन्द्रवार) ३ मंगलवार ४ बुधवार ५ बृहस्पतिवार (गुरुवार) ६ शुक्रवार ७ शनिवार (थावर)।

एक वर्षमें बारह महीने।

हिंदी महीनोंके नाम	अंगरेजी महीनोंके नाम।
१ चैत्र (चैत)	१ जनवरी
२ वैशाख	२ फेब्रुअरी (फर्वरी)
३ ज्येष्ठ (जेठ)	३ मार्च
४ आषाढ	४ अप्रेल
५ श्रावण (सावन)	५ मे (मई)
६ भाद्रपद (भादों या भादवा)	६ जून
७ आश्विन (कुआर असोज)	७ जुलै (जुलाई)
८ कार्तिक (कातिक)	८ आगष्ट (अगस्त)
९ मार्गशीर्ष (अगहन मगसिर)	९ सेप्टेंबर (सितंबर)
१० पौष (पूस या पोह)	१० अक्टूबर (अक्तूबर)

११ माघ (माह)	११ नवेंबर (नवबर]
१२ फाल्गुन (फागुन)	१२ दिसेंबर (दिसबर)

दो दो महीनेकी षट् (छह) ऋतु।

१ ग्रीष्म २ वर्षा ३ शरद् ४ हेमंत ५ शीत ६ वसंत।

चवालीसवां पाठ।

चार गति।

हम तुम सबही जीव चालीसवें पाठमें कहे हुये आठों कर्मोंके फलसे इस ससारकी चार प्रकारकी गतियोंमें जन्ममरण करते हुये नाना प्रकारके दु ख भोगते रहते हैं। इसकारण चारगतियों का स्वरूप सबको जानना चाहिये।

१। नरकगति—घडे २ आरभ करने, मदिरापान करने, मास भक्षण करने इत्यादि तीव्र हिंसादिक पाच पापोंके करनेवाले जीव नरकमें पडते हैं। नरकोंमें रचमात्र भी सुख नहीं है, महा अग्र कारमय है। अग छेदनभेदनका दु ख सहना पडता है, अग्निमें जलना पडता है। भूख प्यास इतनी लगती है कि सारे ससारका अन्न जल प्राप्त होनेपर भी नहि मिट सके परतु एक कण अन्न वा एक बूद पानी कभी नहि मिलता। इत्यादि नानाप्रकारके ऐसे ऐसे दु ख बहुत काल तक भोगने पडते हैं जिनका वर्णन केवलज्ञानी भी नहि कर सकते। ऐसे ऐसे दु ख हम तुम और सब जीवोंने अनतवार भोगे हैं।

जिन नरकोंमें उक्त प्रकारके दु ख होते हैं, वे नरक इस पृथ्वीके नीचे सात हैं। उनके नाम दो दो हैं। जैसे—१ रत्नप्रभा (धम्मा) २ शर्कराप्रभा (वशा) ३ वालुकाप्रभा (मेघा) ४ पंक-

प्रभा (अंजना) ५ धूमप्रभा (अरिष्टा) ६ तम प्रभा (मघवी) ७ महातम प्रभा (माघवी)।

इन नरकोंमेंसे पहिलेसे दूसरेमें दूसरेकी अपेक्षा तीसरे आदिमें अधिक २ दुःख तथा आयु अधिक २ होती है।

२। तिर्यंचगति—छल, कपट, माया आदि करनेसे तिर्यंच गतिमें जाना पड़ता है अर्थात् सिंह, बाघ, हाथी, मृग, गाय, भैंस बैल गधा, पक्षी, सांप बिच्छू वगैरहका शरीर धारण करके भूख प्यास, गर्मी, शीत, वध बंधन, मारन ताड़न, भारवहन वगैरहके अनंत दुःख भोगने पड़ते हैं सो प्रत्यक्ष हम लोग देख रहे हैं।

३। मनुष्यगति—थोड़ा आरंभ और थोड़ा परिग्रह रखनेसे मनुष्यगति होती है। मनुष्यगतिमें हमलोग न्याय अन्यायके विचार रहित हो जाते हैं। लज्जा रहित, परस्त्री सेवन, मांसभक्षण, हिंसा, चोरी, असत्यभाषणादि पाप करते हैं, जिनसे नानाप्रकारके दुःख भोगते हैं। किसीके धन नहीं है, खाने पीनेका ठिकाना नहिं है। धन है तो पुत्र पौत्रादि नहिं हैं। किसीको पुत्रादि होकर मर जाते हैं। कोई हमेशह रोगी है इत्यादि नानाप्रकारके दुःख इस मनुष्यगतिमें भोगते हैं।

४। देवगति—यद्यपि देवगतिमें नानाप्रकारके सुखदायक पदार्थ प्राप्त हैं परन्तु परस्पर वैर, कलह, शोक, मत्सर, काम, मद, मरण भय वगैरह मानसिक दुःख बहुत होते हैं।

देवगतिमें चार प्रकारके देव होते हैं- जैसे भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक। भवनवासी इस पृथ्वीसे नीचे और प्रथम नरकसे उपर रहते हैं। व्यंतरदेव इसी पृथ्वीपर पहाड़ जंगल, नदी आदि स्थानोंमें रहते हैं। ज्योतिषी देव सूर्य

चन्द्रमा ग्रह नक्षत्र तारा ये पांच प्रकारके हैं सो पृथिवीके बीचमें लक्ष योजन ऊंचा सुमेरु है उसके चारोंतरफ पूर्वसे दक्षिण पश्चिमकी तरफ होते हुए फिरते रहते हैं और वैमानिक देव विमानोंमें रहते हैं। विमानोंमें १६ स्वर्ग ९ ग्रैवेयक ९ अनुदिश और ५ पंचोत्तर विमान हैं।

इन चारों गतियोंमें सबसे उत्तम मनुष्यगति है, क्योंकि मनुष्यगतिमें ही यह जीव श्रावक तथा मुनिके व्रत धारण करके मोक्षपदको प्राप्त हो सकता है। और ३ गतियोंमें चारित्र धारण नहीं बनता। यह मनुष्यगति और इसमें भी उत्तम कुल नीरोग शरीर सतसंगति वगैरह मिलना अतिशय दुर्लभ है। इस कारण इस मनुष्यभवको पाकर विद्या पढकर धर्म सेवन करके जो कुछ आत्मकल्याण बन सके करते रहना चाहिये।

पैंतालीसवां पाठ।

सेठके पांच पुत्र।

एक सेठके पांच पुत्र थे वे बडे मूर्ख थे। इसकारण हरएक बातपर आपसमें लडते झगडते थे। उनका पिता अपने पुत्रोंको बहुत समझाया करता था, परन्तु वे एक नहिं सुनते थे। जब उनका पिता मरने लगा तब पांचों पुत्रोंको बुलाकर उन्हें एक कच्चे सूतकी लच्छी (आंटी) दी और कहा कि लडको! तुम सब इसपर अपने अपने बलकी परीक्षा करो अर्थात् अपने बलसे इस लच्छीके दो टुकडे कर डालो। प्रत्येकने उस आंटीको अपना बल लगाकर तोडना चाहा परन्तु किसीसे भी नहिं टूटी। तब पिता ने कहा कि देखो कच्चे सूतका तार कितना कमजोर होता है,

६० साठ मिनटका एक घंटा।
२४ चौबीस घंटेका एक दिन (रातके १२ बजेसे रातके बारह बजे तक)
७ सात दिनका एक हफ्ता या एक सप्ताह।
४ हफ्ते या तीस दिनका एक महीना या एक मास।
१२ बारह महीनेका एक वर्ष।
५२ हफ्तेका एक वर्ष।
३६५ तीनसौ पैंसठ दिनका एक वर्ष।

एक हफ्ताके सात वार

१ रविवार (अदीतवार व इतवार) २ सोमवार (चन्द्रवार) ३ मंगलवार ४ बुधवार ५ बृहस्पतिवार (गुरुवार) ६ शुक्रवार ७ शनिवार (शनिचर)।

एक वर्षमें बारह महीने।

हिंदी महीनोंके नाम	अंगरेजी महीनोंके नाम।
१ चैत्र (चैत)	१ जनवरी
२ वैशाख	२ फेब्रुअरी (फर्वरी)
३ ज्येष्ठ (जेठ)	३ मार्च
४ आषाढ़	४ अप्रैल
५ श्रावण (सावन)	५ मे (मई)
६ भाद्रपद (भादों या भादवा)	६ जून
७ आश्विन (कुवार असोज)	७ जुलै (जुलाई)
८ कार्तिक (कातिक)	८ अगष्ट (अगस्त)
९ मार्गशीर्ष (अगहन मगसिर)	९ सेप्टेंबर (सतंबर)
१० पौष (पूस या पोह)	१० अक्टूबर (अक्तूबर)

११ माघ (माह) ११ नवेंबर (नवबर]
१२ फाल्गुन (फागुन) १२ दिसेंबर (दिसबर)

दो दो महीनेकी षट् (छह) ऋतु।

१ ग्रीष्म २ वर्षा ३ शरद् ४ हेमंत ५ शीत ६ वसत।

चवालीसवां पाठ।

चार गति।

हम तुम सबही जीव चालीसवें पाठमे कहे हुये आठों कर्मोंके फलसे इस ससारकी चार प्रकारकी गतियोंमें जन्ममरण करते हुये नाना प्रकारके दुःख भोगते रहते हैं। इसकारण चारगतियों का स्वरूप सबको जानना चाहिये।

१ नरकगति—बडे २ आरंभ करने, मदिरापान करने, मास भक्षण करने इत्यादि तीव्र हिंसादिक पाच पापोंके करनेवाले जीव नरकमें पडते हैं। नरकोंमे रचमात्र भी सुख नहीं है, महा अध कारमय है। अग छेदनभेदनका दुःख सहना पडता है, अग्निमें जलना पडता है। भूख प्यास इतनी लगती है कि सारे ससारका अन्न जल प्राप्त होनेपर भी नहिं मिट सके परन्तु एक कण अन्न या एक बूद पानी कभी नहिं मिलता। इत्यादि नानाप्रकारके ऐसे ऐसे दुःख बहुत काल तक भोगने पडते हैं जिनका वर्णन केवलज्ञानी भी नहिं कर सकते। ऐसे ऐसे दुःख हम तुम और सब जीवोंने अनतवार भोगे हैं।

जिन नरकोंमे उक्त प्रकारके दुःख होते हैं, वे नरक इस पृथ्वीके नीचे सात हैं। उनके नाम दो दो हैं। जैसे—१ रत्नप्रभा (धम्मा) २ [illegible] ३ वालुकाप्रभा (मेघा) ४ [illegible]

प्रभा (अंजना) ५ धूमप्रभा (अरिष्टा) ६ तम प्रभा (मघरा) ७ महातमःप्रभा (माघवी)।

इन नरकोंमेंसे पहिलेसे दूसरेमें दूसरेकी अपेक्षा तीसरे आदि में अधिक २ दुःख तथा आयु अधिक २ होता है।

२। तिर्यचगति—छल, झूठ, माया आदि करनेसे तिर्यच गति में जाना पड़ता है अर्थात् सिंह, बाघ, हाथी, मृग, गाय, भैंस बैल, गधा, पक्षी, सांप विच्छू वगैरहका शरीर धारण करके भूख, प्यास, गर्मी, शीत, बंध बधन, मारन, ताडन, भारवहन वगैरहके अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं सो प्रत्यक्ष हम लोग देख रहे हैं।

३। मनुष्यगति—थोड़ा आरंभ और थोड़ा परिग्रह रखनेसे मनुष्यगति होती है। मनुष्यगतिमें हमलोग लाभ अलाभके विचारसे रहित हो जाते हैं। लज्जा रहित, परस्त्री सेवन, मांसभक्षण, हिंसा, चोरी, असत्यभाषणादि पाप करते हैं, जिनसे नानाप्रकारके दुःख भोगते हैं। किसीके धन नहीं है, खाने पीनेका ठिकाना नहिं है। धन है तो पुत्र पौत्रादि नहिं हैं। किसीके पुत्रादि होकर मर जाते हैं। कोई हमेशह रोगी है इत्यादि नानाप्रकारके दुःख इस मनुष्यगतिमें भोगते हैं।

४। देवगति—यद्यपि देवगतिमें नानाप्रकारके सुखदायक पदार्थ प्राप्त हैं परंतु परस्पर वैर, क्लेश, शोक, मत्सर, काम, मद, मरण भय वगैरह मानसिक दुःख बहुत होते हैं।

देवगतिमें चार प्रकारके देव होते हैं- जैसे भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक। भवनवासी इस पृथ्वीसे नीचे और प्रथम नरकसे ऊपर रहते हैं। व्यंतरदेव इसी पृथ्वीपर पहाड़ वृक्ष, जंगल, नदी आदि स्थानोंमें रहते हैं। ज्योतिषी देव सूर्य

चद्रमा ग्रह नक्षत्र तारा ये पांच प्रकारके हैं सो पृथिवीके बीचमें लाख योजन ऊंचा सुमेरु है उसके चारोंतरफ पूर्वसे दक्षिण पश्चिमकी तरफ होते हुए फिरते रहते हैं और वैमानिक देव विमानोंमें रहते हैं। विमानोंमें १६ स्वर्ग ६ ग्रैवेयक ६ अनुदिश और ५ पचोत्तर विमान हैं।

इन चारो गतियोंमें सबसे उत्तम मनुष्यगति है, क्योंकि मनुष्यगतिमें ही यह जीव श्रावक तथा मुनिके व्रत धारण करके मोक्षपदको प्राप्त हो सकता है। और ३ गतियोंमें चरित्र धारण नहीं बनता। यह मनुष्यगति और इनमें भी उत्तम कुल नीराग शरीर सतसंगति वगैरह मिलना अतिशय दुर्लभ है। इस कारण इस मनुष्यभवको पाकर विद्या पढ़कर धर्म सेवन करके जो कुछ आत्मकल्याण बन सके करते रहना चाहिये।

पैंतालीसवा पाठ।

सेठके पांच पुत्र।

एक सेठके पांच पुत्र थे वे बड़े मूर्ख थे। इसकारण हरएक बातपर आपसमें लड़ते झगड़ते थे। उनका पिता अपने पुत्रोंको बहुत समझाया करता था, परन्तु वे एक नहिं सुनते थे। जब उनका पिता मरने लगा तब पांचों पुत्रोंको बुलाकर उन्हें एक कच्चे सूतकी लच्छी (आंटी) दी और कहा कि लड़को! तुम सब इसपर अपने अपने बलका परीक्षा करो अर्थात् अपने बलसे इस लच्छीके दो टुकड़े कर डालो। प्रत्येकने उस आंटीको अपना बल लगाकर तोड़ना चाहा परन्तु किसासे भी नहिं टूटी। तब पिता ने कहा कि देखो कच्चे सूतका तार कितना कमजोर होता है

परन्तु बहुतसे सूत मिलकर कैसे बलवान होगये ? इसप्रकार यदि तुम लोग जुदे जुदे रहकर आपसमें लड़ते रहोगे, तो तुमको [illegible] कोई दया लेगा और यदि तुम पांचों भाई मिलकर रहोगे और वक्तके दुःखमें अपनेको दुःखा मान हर तरहसे उसको सुखी कर नेकी कोशिश करते रहोगे, तो तुमको बहुत ही आनन्द प्राप्त होगा और कोई भी शत्रु तुम्हारा कुछ नहिं कर सकेगा। अपने पिताकी यह बात सुनकर पांचो भाई बड़े खुश हुए और पिताके मरने पीछे आपसमें मेलसे रहकर सुखसे काल व्यतीत करने लगे।

हे बालको ! भाईके बराबर अपना हितैषी और कोई भी नहीं हो सकता, इसकारण तुम हमेशह अपने भाइयोंसे तथा साथके पढ़नेवाले मित्रोंसे प्रीति रखते रहो।

छियालीसवा पाठ।

नीतिक दोहे।

जितनी चाह अथाहकी, हात अधिकता चित्त।
उतना सुख दुख जानिये, तन मनको हे मित्त॥ १॥
समरथको कछु भार नहिं, गुन न विदेशहि होन।
उद्यमीनको दूर क्या, हसमुखका पर कौन॥ २॥
इन्द्रिय संयम संपदा, विपद असंयम जान।
जामें अपना इष्ट हो, ताहि गहो मतिमान॥ ३॥
जहां मान मत्सर मदन, मदिरा मिथ्या द्यूत।
सो कुसंग दुखदा सदा, जाय न तहां सपूत॥ ४॥
न्याय विवेक गुणज्ञता, विद्या शील स्वरूप।
धीरज सत्य उदारता, समता वसन अनूप॥ ५॥

प्रिय भाषण पुनि नम्रता, आदर प्रीति विचार।
लज्जा क्षमा अयाचना, ये भूषण उरधार॥ ६॥
शत्रु नहीं कोऊ राग सम, विद्या सम नहिं मित्र।
नहीं सनेह सपुत्र सम, विधिरत्न अति ही विचित्र॥ ७॥
सिंधु भूमिका आवरन, गृहरक्षक आकार।
नृपति आवरण देशका, त्यों सतीत्व कुलनार॥ ८॥
तिय अहार नरसे द्विगुण, बुद्धि चतुर्गुण जान।
साहस नरसे षट्गुणा, लाज आठ गुण मान॥ ९॥

सैंतालीसवां पाठ।

ग्रीष्मऋतु।

बारह महीनेमें वैशाख और ज्येष्ठ ये दो महिने ग्रीष्म ऋतुके हैं। ग्रीष्म ऋतुमें सूरजकी गर्मी अतिशय तेज हो जाता है। नदी नालाव कूप आदि जलाशयोंका जल प्राय सूख जाता है। दिनमें धूपके कारण घरसे बाहर निकलनेको जी नहीं चाहता। शरीर पसीनेसे हर समय तर (भाजा) रहता है और प्यास बहुत लगती है। इन दिनों समस्त जीव जंतु ठंडा जगहोंमें रहना चाहते हैं, दक्षिणी हवा चला करती है, कभी २ अपराह्नके समय आंधी व मेंह भी आता है। आम, जाम, कटहल, आदि अनेक मीठे फल पक जाते हैं। इस ऋतुमें दिन बढ़ते जाते हैं और रात्रि छोटी हो जाती है।

बालको! तुम ग्रीष्म ऋतुके दिनोंमें धूपके समय घरसे बाहर कदापि नहिं निकलना। शामके समय जब पृथ्वी और हवा ठंडी हो जाती है, तब खेलनेके लिये घरसे बाहर निकलना तुम्हारे लिये सुखदाई होगा।

अड़तालीसवां पाठ।

वर्षा ऋतु।

आषाढ़ और श्रावण (सावन) ये दो महीने वर्षा ऋतुके हैं। इन दिनों आकाश प्रायः बादलोंसे घिरा रहता है। वर्षा व मेघ गर्जना अतिशयताके साथ होता रहती है। नदी नाले तालाव आदि जलाशय जलसे परिपूर्ण हो जाते हैं, कहीं कहीं रास्तेमें भी बड़ा कीचड़ हो जाता है। इस कारण लोगोंके आने जानेमें बड़ा दुःख होता है, वर्षाऋतुमें मेंडक बहुत आनंद करते हैं। मेंडकगण नवीन जलको पाकर उच्चस्वरसे गान गाते रहते हैं, मयूरगण (मोर) भी मेघगर्जनाको सुन आनंदमें उन्मत्त हो नाचते रहते हैं। केतकी और कदंब आदिके फूलोंकी सुगंधिसे दशों दिशा भर जाता है। अननास आदि अनेक स्वादिष्ट फल पक जाते हैं, किसान लोग खेतोंमें धान्यादि बोने लग जाते हैं।

इस ऋतुमें प्रायः पुरवाई हवा चला करती है। यह हवा अतिशय हानिकारक है, उस हवाको अपने शरीरपर कभी नहिं लगने देना चाहिये। यदि यह हवा तुम्हारे शरीरपर लगेगी और मेहमें भीजोगे तथा कीचड़में फिरोगे तो कफ (जुखाम) खासी, ज्वर (बुखार) आदिक रोगोंसे पीड़ित हो जावोगे।

उनचासवा पाठ।

शरद ऋतु।

भाद्रपद (भादों) आश्विन (कुवार) ये दो महीने शरद ऋतुके गिने जाते हैं। इस ऋतुमें आकाश निर्मल हो जाता है, किरणें तेज हो जाती हैं, रास्तेका कीचड़ व जल सूखने

लग जाता है, नदीका जल भी निर्मल हो जाता है, और तारा तथा चन्द्रमाका प्रकाश उज्ज्वल हो जाता है, जिससे रात्रिमें आकाशकी शोभा अतिशय मनोहर हो जाती है। इस ऋतुमें कमल, कुमुद आदि पानीमें पैदा होनेवाले फूल प्रफुल्लित होकर जलाशयोंकी शोभा बढ़ाते हैं। हंस, बगुला, चकवाक, आदिक जलचरपक्षी आनन्दसे जलमें खेलते फिरते हैं, ताल, नींबू, सुपारी, नारियल, आदि अनेक फल पक जाते हैं।

शरद ऋतुमें सबके सब खेत धान्यसे परिपूर्ण हो नेत्र और मनको आकर्षण करते हैं। हे बालको! यदि तुम इस ऋतुमें सन्ध्या सवेरे खेतोंमें हवा खाने जाओगे, तो देखकर खुश हो जाओगे। इस ऋतुमें धूप अतिशय हानिकारक होती है। यदि इस ऋतुकी धूपमें फिरोगे तो तुम अवश्य रोगी हो जाओगे।

पचासवां पाठ।

हेमंत ऋतु।

कार्तिक और मार्गशीर्ष (अगहन) ये दो महीने हेमंत ऋतुमें गिने जाते हैं। इस ऋतुमें उत्तरी तरफसे थोडी २ ठंडी हवा आने लगती है, और थोडा थोडा शीत भी पडने लगता है। रात्रिमें इतनी ओस पडता है कि—प्रातःकाल ही देखनेसे मालूम होता है मानो मेह बरसा है।

इन दिनों सब लोग रूई भरे अथवा ऊनी गरम कपडे पहरने लग जाते हैं, और क्रमक्रमसे दिन छोटा और रात्रि बडी होती जाती है। धूपकी गर्मी भी क्रमक्रमसे घट जाती है। इन दिनों खेतोंमें सब अन्न पक जाते हैं।

हेमन्त ऋतुमें ठंढ शरीरपर लगनेसे दर्द हो जाता है, इस कारण शरीरको सदा गर्म कपड़ोंसे ढका रखना चाहिये। हे बालको! इन दिनों रात्रिमें व प्रभात ही उघारे शरीर घरके बाहर कदापि मत निकलो।

इकावनवां पाठ।

शीत ऋतु

पौष और माघ ये दो महीने शीत ऋतुमें गिने जाते हैं। इस ऋतुमें उत्तरकी हवा जितने जोरसे आती है, उतनी ही ठंढ अधिक पड़ती है। रात्रिका समय लोग ठंढसे बचनेके लिये सौड़ कंबल आदि काममें लाते हैं दिनमें भी शाल दुशाला बनात रजाई आदि ओढ़े बिना ठंढ नहिं जाता। इन दिनों पानी छूनेको किसीका भी जी नहिं चाहता। सबको सूर्य और अग्नि ही प्रिय हो जाते हैं।

रात्रिमें आकाश कुहरा वा ओससे ढक जाता है जिससे तारागण और चन्द्रमा निर्मल नहिं दीखते। इस ऋतुमें रात्रि बहुत बड़ी और दिन बहुत छोटा हो जाता है। बंगाल देशमें मूंग मटर, सरसों आदिक धान्य पक जाते हैं परन्तु कमल कुमुद वगैरहके फूल सब नष्ट हो जाते हैं। इन दिनों कहीं कहीं मेह भी बरसने लगता है और सब लोगोंमें परिश्रम करनेकी शक्ति बढ़ जाती है।

बावनवां पाठ।

वसंत ऋतु

फाल्गुण और चैत्र ये दो महिने वसंत ऋतुमें गिने जाते हैं।

वसंत ऋतुमें दक्षिणकी तरफसे मंदमंद हवा चलने लगती है। आकाश निर्मल हो जाता है। सूर्यका तेज अधिक होने लगता है। चद्रमा और तारोंका प्रकाश निर्मल रहता है। प्राय सभी जातिके वृक्ष और लताओंकी शोभा बढने लग जाती है। किसीके नये २ पत्ते निकलते हैं, किसीके मजरी, किसीके फूल और किसीके फल लगने शुरू होते हैं। भौंरे और मधु मक्खियां एक फूलसे दूसरे फूलपर उड २ कर बैठतीं हैं और कोकिल आदि पक्षी वृक्षकी शाखाओं पर बैठे हुए बडे मनोहर स्वरसे बोलते हैं।

वसत ऋतु सब ऋतुओंकी अपेक्षा श्रेष्ठ है, इसलिये कवि लोग इसे ऋतुराज कहते हैं। इस ऋतुमें शीत , उष्णता, वृष्टि आदि कुछ भी नहीं रहती, इस कारण समस्त जीव जतु आनंदसे रहते हैं।

तिरेपनवां पाठ।

जलवृष्टि ओले व बरफ।

सूर्यकी तेजीसे नदी, कूप, तालाब, समुद्र आदिसे जलकी बहुत सूक्ष्म भाफ होकर आकाशमें एकत्र होनेसे बदल हो जाते हैं और ठडी हवा लगनेसे बादलोंका अंश एकत्र होकर बडे२ जल बिंदु हो जाते हैं। तब वे जलबिंदु भारी हो जानेके कारण हवा के सहारे आकाशमें नहिं ठहर सकें, इस कारण जमीन पर आ पडते हैं। इसीको जलवृष्टि अथवा वर्षा होना कहते हैं।

नदी तालाब आदि जलाशयोंकी अपेक्षा वृष्टिका जल निर्मल होता है क्योंकि सूर्यकी तेजीसे भाफ होते समय वह जल शुद्ध हो जाता है।

। पृथ्वीके समस्त खण्डों (देशों) में जलवृष्टि एकसी नहिं होता, कहीं कहीं पर तो वृष्टि हमेशह हुआ करती है और कहीं कहीं पर वर्ष भरमें एक बार भी नहीं होती। इसका कारण यही है कि जिन जिन देशोंमें नदी समुद्रादिक बहुत होते हैं उन देशोंमें अधिक भाफ बनती है और उन देशोंमें वृष्टि भी अधिक होती है। और जिन देशोंमें नदी तालाब आदिक कम होनेसे भाफ बहुत कम पैदा होती है, अथवा अन्य देशोंसे भाफ बने हुए बद्दल नहिं आसके वहांपर वृष्टि बहुत कम होती है। बंगाल देशकी पूर्व सीमामें खसिया पहाड और चिरापुञ्जी आदि देशोंमें अन्यान्य जगहोंकी अपेक्षा वृष्टि अधिक होता है और हिमालयसे उत्तर तिब्बतमें बहुत कम वृष्टि होता है। उसका कारण यही है कि बंगालके उपसागरोंमेंसे उत्पन्न हुई बाफ (बद्दल) हिमालय पर्वतको उल्लंघन करके नहिं जा सकती। इसीप्रकार मारवाड देशोंमें भी नदी समुद्र न होनेसे वृष्टि बहुत कम होता है।

बंगाल देशमें व बंबई प्रांतोंमें वर्षा ऋतुके समय प्राय निरंतर जलवृष्टि हुआ करती है। कारण उस समय बंगालमें दक्षिण की हवा आती है सो वह हवा बंगालके उपसागरसे बने हुये बहुतसे बादलोंको उड़ा लाता है, इसके सिवाय बंगाल देशमें नदियें भी बहुत हैं और बंबईके तो प्राय तीन तरफ ही समुद्र है, जिससे प्रतिदिन बद्दल बन बन कर प्राय प्रतिदिन वृष्टि हुआ करती है। शीतकालके दिनोंमें बंगाल देशमें वृष्टि बहुत कम होती है कारण उन दिनोंमें उत्तरकी हवा चलती है और उत्तरकी तरफमेंमें समुद्र नहीं है इस कारण भाफ व बद्दलोंकी उत्पत्ति नहीं होती परन्तु चैत व वैशाखसे ही वर्षा होने लगती है।

बीचमें कभी २ ओले पड़ा करते हैं सो जिस समय बद्दलों मेंसे बड़े २ जलबिंदु गिरते हैं उस समय अतिशय ठंडी हवा लगनेसे वे जमकरके ओले हो जाते हैं।

बद्दल हवाके वेगसे उड़ उड़ कर पर्वतों पर जाकर इकट्ठे हो जाते हैं। वहां अतिशय ठंडी हवाके लगनेसे जमकर तुषार (ओस) हो जाता है और तुषार जमकरके बर्फ हो जाता है।

शीतप्रधान देशोंमें दो दो तीन तीन दिन तक तुषारकी वृष्टि होती है तब समस्त घर द्वार रास्ते घाट तुषारसे ढके हुए श्वेत वर्ण दीखते हैं।

अधिक शीत होने पर शीतप्रधान देशमें जल जमकर बर्फ हो जाता है। उन देशोंमें तालाब हद, नदी वगैरहका उपरिभाग जम जानेसे उसके ऊपर होकर जमीनकी तरह लोग चल फिर सकते हैं। जब सूर्य्यका तीक्ष्ण आताप लगता है तो गलकर फिर जल हो जाता है।

चौवनवां पाठ।

आभार मानना।

एक दिन एक पाठशालाके समस्त विद्यार्थियोंने अपने गुरुजी से विनय करके कहा कि—महाराज आज तो हमें कोई ऐसी शिक्षा दीजिये जिसको हम लोग हमेशह याद रक्खें। विद्यार्थियों का यह प्रश्न सुनकर गुरुजीने कहा कि—अच्छा तुम अपनी २ सिलेट पर तीन शब्द लिखो,—

आचार, भावना, रहम।

गुरु—अब तुम लोग इन तीनों शब्दोंके अर्थ कहो।

एक विद्यार्थी बोला—आचार कहिये अपने देश व कुलका उत्तम रीति या रिवाज।

दूसरा विद्यार्थी बोला—भावना कहिये हित अहितके विषयों का वारवार चिंतवन यानी विचार करते रहना।

तीसरा विद्यार्थी बोला—रहम कहिये दया अर्थात् दीन दुःखी असमर्थ जीवों पर दया करना।

गुरु—अच्छा अब इन तीनों शब्दोंका पहिला२ अक्षर लेकर एक शब्द बनाओ।

एक विद्यार्थी—महाराज! आचार शब्दका पहिला अक्षर 'आ' भावनाका पहिला अक्षर 'भा' रहमका पहिला अक्षर 'र' इन तीनोंको मिलानेसे 'आभार' शब्द हुआ।

गुरु—हे लड़को! अब इस शब्दका अभिप्राय समझो कि जो कोई अपने साथ भलाई करे, अपनेको किसी भी अच्छे कार्यमें सहायता दे या उपकार करे, दुःखसे छुटावे, अच्छे रस्ते पर लगावे, उसको अपने मनमें हमेशह याद रखना और अपने वचनोंसे प्रगट करना कि उन्होंने हमारा बड़ा उपकार किया है। उस उपकार करनेवाले पर कोई भी दुःख पड़े तो अपना तन मन धन खर्च करके उसका प्रति-उपकार करना इसीको आभार मानना कहते हैं। जिसमें आभार माननेका गुण है, उसमें आ सदाचार भावना, रहम ये तीन गुण होते हैं अर्थात् जिसका अच्छा आचार हो, अच्छे विचार हों, और दया हो, वही मनुष्य दूसरेका आभार मान सकता है। जो मनुष्य दूसरेके किये उपकारको मानता नहीं भूल जाता है, उसको कृतघ्नी कहते हैं। कृतघ्नीका फिर कोई भी दूसरी वार उपकार वा सहायता नहिं

करना। यद्यपि दूसरेका उपकार तो किसी न किसी समय माननेमें आ भी जाता है परंतु तुम लोगोंका जो वास्तवमें हमेशह उपकार करनेवाले हैं, उनका आभार तो तुम्हें हमेशह हृदयसे मानना चाहिये। मनुष्यको जिंदगीमें वास्तवमें उपकार करनेवाले ४ जने हैं—माता, पिता, धर्मगुरु और विद्यागुरु।

माता हमको अनेक कष्ट सहकर पालन पोषण करके बड़ा करती है, पिता हमको विद्या गुण सिखाकर योग्य बनाते हैं। धर्मगुरु हमको अपने उपदेशों द्वारा पापका रास्ता छुड़ाकर धर्म-के मार्गमें लगाते हैं और विद्यागुरु हमको नानाप्रकारकी विद्यायें सिखाकर पशुसे मनुष्य बनाते हैं, इसलिये इनका आभार जीवन-पर्यंत भूलना नहिं चाहिये।

सब विद्यार्थी अपने गुरुजीका यह उपदेश सुनकर बड़े प्रसन्न हुये और सबने विनय करके कहा कि—हम आजसे कभी किसीका उपकार नहिं भूलेंगे अर्थात् सबका आभार मानेंगे।

पचपनवां पाठ।

सत्संगति।

किसी शिकारीने एक पेड़के नीचे चावलोंके दाने बखेर कर उनपर जाल फैला दिया। वहां पर एक चित्रग्रीव नामक कबूतरोंका राजा अपने साथियों सहित उड़ता उड़ता आ निकला। तब उन सब कबूतरोंने कहा कि "चलो इन चावलोंको चुगें।" परन्तु चित्रग्रीवने कहा कि, मुझे इसमें सन्देह है, इसलिये पहिले इस बातको जानना चाहिये कि इस सुनसान जंगलमें चावल कहांसे आये? और सुनो, जो तुम विना विचारे इन चावलोंको

घुगनेके लिये नीचे उतरोगे तो किसी न किसी विपत्तिमें अवश्य ही फसोगे। देखो गिरधररायजीने क्या कहा है कि—

कुंडलिया।

बिना विचारे जो करै, सो पाछे पछताइ।
काम बिगारै आपनो, जगमें होत हसाइ॥
जगमें होत हसाइ, चित्तमें चैन न पावै।
खान पान सन्मान, राग, रंग मनहिं न भावै।
कह गिरधर कविराय, दुःख कछु टरत न टारे।
खटकत है जियमाहिं करै जो बिना विचारे॥ २॥

यह सुनकर एक कबूतर बोला—"ओह! इस बुड्ढेकी बातें कहा तक मानें!" और जो इस प्रकार बात बातमें सोचा करें तो फिर खाना किस तरह मिले? और कैसे जीयें? यह सुनते ही सबके सब कबूतर नीचे उतरे, तब चित्रग्रीवने सोचा कि जो हो सो हो, पर अब इनका साथ छोड़ना ठीक नहीं। इस प्रकार सोच समझ कर वह भी सबके साथ नीचे उतरा, नीचे उतरते ही सबके सब जालमें फंस गये और जिसके कहनेसे नीचे उतरे थे उस कबूतरको सब बुरा भला कहने लगे। उस समय चित्रग्रीवने कहा कि, भाई! इसमें इसका कुछ भी दोष नहीं है। जब विपत् के दिन आते हैं, तब मित्र भी वैरी बन जाते हैं। इसलिये अब धीरज धरके इस जालसे छूटनेका यत्न करो। क्योंकि नीतिमें कहा है कि— कुंडलिया।

बीती ताहि विसार दे, आगेकी सुध लेहु।
जो बनि आवै सहजमें ताहीमें चित देहु॥
ताहीमें चित देहु, बात जोई बनिआवै।

दुर्जन हँसे न कोय, चित्तमें खेद न पावै ॥
कह गिरधर कविराय, यहै कर मन परतीती ।
आगेको सुख होय, समुझ बीती सो बीती ॥ २ ॥

इतना कह चित्रग्रीव फिर बोला कि, अब सब मिलके इस जालको लेकर उड़ चलो । क्योंकि जो थोड़ेसे भी मिलकर काम करें, तो बड़े बड़े काम हो सकते हैं । देखो ! बाल सबमें कमजोर दिखाई देता है, परन्तु उन्हीं बालोंको एकत्र करके बाट लो, तो उसका ऐसा पक्का और मोटा रस्सा बन जाता है, जोकि बड़े बड़े मल्लाहोंसे भी नहिं टूट सकता । अकेला तार कच्चा कहलाता है, पर जब बहुतसे तार आपसमें बल खाके मिल जाते हैं, तो वे कच्चे तार ऐसे पक्के रस्से हो सकते हैं, जो हाथियोंसे भी नहिं टूट सकते । पानीका एक बिंदु किस गिनतीमें है ? परन्तु बिंदु २ मिलके एक नदी बन सकती है, जो सारे शहरको बहाकर ले जाय । यह सुनकर समस्त कबूतर जाल लेकर उड़े । तब वह शिकारी बहुत दूर तक उनके पीछे पीछे भागा, परन्तु जब वे कबूतर दृष्टिकी ओटमें होगये, तब वह शिकारी निराश होकर लौट आया । आकाशमें उड़ते हुये सब कबूतरोंने चित्रग्रीवसे कहा कि, महाराज ! वह शिकारी तो हमारे मासकी आशा छोड़ कर चला गया, अब हमको क्या करना चाहिये, जो इस जालसे छूटें ! चित्रग्रीवने कहा कि, इस संसारमें,—

"सुर नर मुनि सबकी यहि रीती।
स्वारथ लागि करहि सब प्रीती॥"

परन्तु माता पिता मित्र ये तीन अपने स्वभावसे ही हितैषी होते हैं, इसलिये एक हमारा परममित्र हिरण्यक नामक चूहा

चित्रवनमें गंडकी नदीके किनारे पर रहता है; वहां चलो तो वह हमारे जालकी गाठें काट सकता है। ऐसा सोच विचारके वे सब कबूतर हिरण्यक मूसेके बिलके पास आये। कबूतरोंके उतरनेके शब्दसे डर कर हिरण्यक बिलमें घुस गया परन्तु जब चित्रग्रीव बोला कि—मित्र! बाहर आओ! तब चूहा मित्रकी बोली पह चानकर बाहर आ बोला,—आहा! आज मेरा बड़ा भाग्य है, जो परममित्र चित्रग्रीवके दर्शन हुए! फिर सबको जालमें फसे देख कर बोला कि, मित्र! यह क्या कौतुक है? चित्रग्रीवने कहा कि भाई! यह मेरे पूर्वजन्ममें किये हुये पापोंका फल है, क्योंकि जिसके भाग्यमें जो लिखा है, वह अवश्य मिलता है। यह सुन कर वह चूहा चित्रग्रीवकी गाठें काटने लगा, तब चित्रग्रीवने कहा कि, भाई! पहिले इन सब कबूतरोंकी गाठें काट ले, तब मेरी काटना। चूहेने कहा—मित्र! ये गाठ तो बहुत कड़ी हैं, और मेरे दांत बड़े नर्म हैं, सो मैं अकेला इन सबकी गाठें किसप्रकार काट सकता हूं, अतएव जबतक मेरे दांत नहिं टूटें तबतक तुमारी गाठें काटूंगा, फिर हो सका तो इनकी भी काटूंगा। चित्रग्रीवने कहा कि, जो ऐसा ही है तो जहांतक बने, पहिले इन्हींकी गाठें काटो। हिरण्यक बोला —भाई! यह कौनसी नीति है, जो आप तो दुःखमें फस रहना और दूसरोंको बचाना? चित्रग्रीवने कहा कि, तुम्हारा कहना ठीक है। परंतु मैं इनका दुःख देख नहीं सकता, दूसरे ये सब विना वेतनके मेरी सेवा करते हैं, और हमें शह मेरे साथ हैं सो इसका फल फिर कब और किस कालमें होगा? जो धन दौलत और यह देह दूसरके काममें आवे, तो फिर इससे बढ़कर क्या है? सो मित्रवर! निरंतर मल बहाने-

वाली इस नाशवान देहकी ममता छोडकर अखंड यशके भागी क्यों नहिं होते ? यह सुन हिरण्यक चूहा बहुत प्रसन्न हुआ, और बोला कि, मित्र ! तुम्हें धन्य है जो अपने साथियों पर इतनी दया और ममता करते हो यह कहकर उसने सबकी गाठें काट डालीं। किसीने सच कहा है कि—

सगति कीजै साधुकी, हरै औरकी व्याधि।
ओछी सगति नीचकी, आठों पहर उपाधि ॥ १ ॥
हियतें मिट असाधुपन, लहै अगाध विवेक।
देखो सगति साधुकी, हरै उपाधि अनेक ॥ २ ॥

तत्पश्चात् सब कबूतरोंको बहुनागतसे प्रसन्न करके विनयपूर्वक विदा किया।

छप्पनवां पाठ।

सत्सगति प्रशसा।

(स्वर्गीय पंडित गोपालदासजी कृत)

सज्जनसगतिके किये, उन्नत है सब कोय।
कमलपत्र पर जलकणा, मुक्ताफल सम होय ॥ १ ॥
चदन शीतल जगतमें, तातें शीतल चन्द्र।
चादन चादातें अधिक, साधुसग सुखकन्द ॥ २ ॥
तेजस्वीके सगतें, छुद्र तेजयुत होय।
ज्यों दर्पन रविकिरनतें, दहनशक्ति [illegible] ॥ ३ ॥
साध्य करै दु साध्यको, सतसगति [illegible]।
पुष्पस ग शिवसिर चढी, चिवटी [illegible] ॥ ४ ॥
जो सत्स गति करत [illegible] है [illegible]।

मान प्रतिष्ठा यश लहै, करहि सकल कल्यान ॥ ५ ॥
सत्स गतिके योगतें, खल सज्जन हो जाय ।
ज्यों पयके स योग जल, पयसम उज्जल थाय ॥ ६ ॥
सज्जनकी स गति किये, मूढ होय गुणधाम ।
स्वातिबिंदु सीपहि परे, मुक्तफल परिणाम ॥ ७ ॥

कुंडलिया ।

सज्जनस गतिके किये, मूढ होय विद्वान् ।
सत्य वचन नित उच्चरै, बढै जगतमें मान ॥
बढै जगतमें मान, पापको दूर निसारहिं ।
होय प्रफुल्लित चित्त, दशों दिश यश विस्तारहिं ॥
कहै सुकवि 'गोपाल' नाशकर दुखकी पंगति ।
होय सदा नर सुखी, करै जो सज्जन [illegible] गति ॥ ८ ॥

दोहा ।

तातैं छोरि कुस गको, सत्स गति चितधार ।
करहु सफल नर जन्मको, यही जगतमें सार ॥ ९ ॥

सत्तावनवा पाठ ।

कौआ और चिडिया ।

एक चिडिया कहींपर दाने चुग रही थी, दाने चुगते २ उसको एक मोती मिल गया। उसने प्रसन्नताके साथ एक कौवेको दिखाकर कहा कि देखो भाई! मुझे एक मोती मिला है। कौवेने कहा देखूं यह सच्चा है या झूठा? तब चिडियाने जमीन पर रखके दिखाया तो कौआ उस मोतीको उठाकर झट फौरकै पेडपर जा बैठा। चिडियाने अनेक प्रकारसे विनती करके अपना मोती मांगा, परन्तु कौवेने नहिं दिया। तब लाचार होकर उसने मन

हा मन दृढ प्रतिज्ञाकी कि "जिस प्रकार बने इससे मोती लेना चाहिये।" ऐसा विचार कर वह चिडिया कीकरसे कहने लगी कि हे कीकर! तू इस कौवेको उडादे। कीकरने कहा कि कौवेने मेरा क्या बिगाडा है जो में उडादू। तब वह चिडिया निराश हो वढई (खाती) के पास गई और उससे अर्ज की कि तुम अमुक कीकरको काट डालो। वढइने कहा कि मेरा उसने क्या बिगाडा है जो कीकरको कट डालू? तब वह चिडिया वहासे निराश होकर उस गावके राजाके पास गई और कहने लगी कि महाराज! आप अपने यहाके अमुक खातीको दंड (सजा) दें राजाने कहा कि उसका कोई अपराध नहीं जो मैं दंड दू। तब वहासे लाचार हो वह चिडिया उस राजाकी रानियोंके पास गई और अर्ज करी कि तुम राजा साहबसे रुठ जावो। रानियोंने कहा कि यदि हम राजा साहबसे रुठ जावें तो हमको सुख कैसे हो? तब वह चिडिया चूहोके (मूसोंके) पास गई और प्रार्थना करी कि तुम मेरी सहायता करो अर्थात् रानियोंके पहरनेके सब कपडे काट डालो। चूहोंने कहा कि हम जो उनके कपडे काट डालें और रानिय गुस्सा हो जांय तो वे शहर भरके चूहोंको मरवा डालें, सो भाई हमसे तेरी सहायता नहीं हो सकती। तब लाचार होकर वह बिल्लीके पास गई और प्रार्थना की कि, तू राजाके घरके चूहोंको मार डाल। बिल्लीने कहा कि मैं आज ही सब चूहोंको मार डालू तो कलको क्या खाऊं? सो भाई मैं तेरी सहायता नहीं कर सकी। तब वह चिडिया हिम्मत करके कुत्तेके पास गई और उससे कहा कि भाई तुम मेरी इतनी सहायता करो कि अमुक बिल्लीको मार डालो। कुत्तेने कहा कि बिल्ली

ने मेरा क्या कसूर किया है जो उसको मार डालूं, तब वहांसे भी निराश हो यह चिड़िया एक बांसके पास गई, उससे कहा लगी कि भाई बांस! तू अमुक कुत्तेको मारडाल तब बांसने कहा कि मेरा उसने क्या कसूर किया है जो मारूं? तब वहांसे निराश हो आगके पास गई और प्रार्थना करी कि—हे आगमाता! तू इस बांसको जला दे। आगने कहा कि मैं काहेको तकलीफ उठाऊं? तब यह चिड़िया एक छोटीसी तलइया थी, उसके पास आकर बोली कि तू इस आगको बुझा दे। तलइयाने कहा मैं तो नहिं बुझाती। तब वहीं पर एक हाथी खड़ा था। उसने कहा कि भाई तू मेरेपर दया करके इस सूंड तलइयाका सब पानी सुखा दे। तब हाथीने कहा कि उसका पानी खराब है मैं तो नहीं पीता। तब यह चिड़िया बहुत ही सोच विचार करके वहीं पर एक चींटी (कीड़ी) थी उसके पास आकर बोली कि बहिन! मैं बहुत जनोंके पास हो आई परंतु किसीने मुझे सहायता नहिं दी सो बहन! तू थोड़ीसी मदद कर। तब चींटीने कहा—बहन! तेरी क्या इच्छा है? मेरे लायक काम हो सो तुरत कह, मैं तन मनसे करनेको तैयार हूं। तब चिड़ियाने कहा कि तू इस हाथीकी सूंडमें चली जा, जिससे यह मर जाय। तब चींटीने कहा कि मैं अभी इसको सूंडमें जाती हूं और इसको तेरे देखते देखते मार डालती हूं। यह सुनते ही हाथीने घबड़ाकर कहा कि मेरी सूंडमें काहेको चढ़ती है? मैं चिड़ियाके कथनानुसार इस तलइयाको सुखाये देता हूं। तलइयाने भी घबड़ाकर कहा कि मुझे काहेको सुखाता है मैं आगको बुझाये देती हूं। आगने कहा कि मुझे काहेको बुझाती है? मैं बांसको जलाये देती हूं।

तब घासने कहा कि मुझे काहेको जलाती है, मैं कुत्तेको मारे डालता हूं। कुत्तेने कहा मुझे काहेको मारता है? मैं बिल्लीको मार डालता हूं। बिल्लीने भी घबडाके कहा कि मुझे काहेको मारेगा मैं चूहोंको मारे डालती हूं। चूहोंने कहा कि हमें काहेको मारते हो? हम रानियोंके कपडे काट डालेंगे। रानियोंने कहा कि हमारे कपडे काहेको काटोगे? हम राजा साहबसे रूठ जायगी। राजाने कहा कि—हमसे काहेको रूठती हो? मैं बढई (खाती) को जुरमाना कर दूंगा। बढईने कहा कि मेरे पर जुरमाना क्यों करते हो? मैं कीकरको काटे डालता हूं। कीकरने कहा कि मुझे काहेको काटता है। मैं कौवेको उडाये देता हूं। कौवेने कहा कि मुझे काहेको उडाता है? लो मैं चिडियाका मोती चिडियाको दिये देता हूं।

इस कहानीसे यह शिक्षा लेनी चाहिये कि—आजकल हम लोग इतने बेहिम्मत हो गये हैं कि—किसी भी कार्यको प्रारंभ करते हैं तो किंचित्मात्र विघ्न आनेपर झट छोड देते हैं, या किसी कार्यके करनेमें एकबार सफलता नहीं हुई तो फिर उससे निराश हो छोड बैठते हैं। सो ऐसा कदापि नहीं होना चाहिये। बारबार साहस करके उस कार्यको करना चाहिये, चिडियाकी तरह उपाय करते रहनेपर कभी न कभी वह कार्य अवश्य ही फलीभूत होगा, क्योंकि उद्यम कभी वृथा नहीं जाता।

अट्ठावनवां पाठ।

सुंदरलाल।

अनेक उत्तमोत्तम गुणोंके समान 'हिम्मत (साहस) भी बडा भारी गुण है। हिम्मत रखनेसे कैसे ही कठिन कार्य क्यों न

हों, वे सब सिद्ध हो सकते हैं। हिम्मतवान मनुष्य इस दुनिया में निर्भय चलता है। विद्या, धन, दौलत, तप, संयम और सुख वगैरह सब हिम्मतके अधीन हैं। जिसमें हिम्मत होती है, उस मनुष्यको प्राप्त न हो सके ऐसी कोई भी संपदा नहीं है। कुल, जाति, समाज, ग्राम और देशका अभिमान रखनेवाले पुरुष हिम्मत हो तो अभिमान रखकर सब ही अच्छे २ कार्य कर सकते हैं। उद्योगी व्यापारीगण हिम्मतसे ही बडा भारी धन पैदा कर सकते हैं, तपस्वीगण व्यास वगैरह तपस्या व महाव्रत पाल सकते हैं, और सब जने हिम्मतसे ही सब तरहके सुख प्राप्त कर सकते हैं। हिम्मत गुणसे ही सुंदरलालने पांच जीवोंको बचाकर उन्हें जीवदान देकर सुखी किया था, सो सुनो—

वर्द्धमान नगरमें सुंदरलाल नामका एक जैनी था। वह धर्मात्मा और परोपकारी था। उसमें हिम्मत गुण सबसे बढकर था। चाहे जैसा कठिन कार्य क्यों न हो, वह हिम्मतके प्रभावसे कर सकता था। जिस कार्यके सिद्ध करनेमें अन्य जन कायर होकर ना उम्मेद हो जाते थे, वह कार्य सुंदरलाल सिद्ध कर सकता था। सुंदरलालकी माता बडी गुणवती थी, और भी अनेक गुण उसमें थे परंतु हिम्मतगुण नहीं था, इसलिये बडे २ कार्योंमें वह कायर हो जाती थी।

एक समय सुंदरलाल गर्मीके कारण छतपर सो रहा था, नगरमें अचानक ही बडा भारी कोलाहल (हल्ला) सुनकर वह जग पडा और उठकर देखा तो मालूम हुआ कि किसीके घरमें लाय (आग) लग गई है। सुंदरलाल उसी वक्त वहां जानेके लिये तैयार होने लगा। उसकी माने मनाही की कि—बेटा!

वहा नहीं जाना, वहा जानेसे तुम्हारे शरीरपर कुछ न कुछ आफत आना समव है। सुदरलालने कहा कि अम्मा यह क्या कहती है? ऐसा कायरपनके वचन कभी नहीं कहने चाहिये। किसी विचारे गरीबका घर जलता होगा तो उसे आकर सहायता (मदद) करना चाहिये। भयके मारे कायर होकर बैठे रहना कायर व नामरदका काम है।

इसप्रकार माताको समझा कर वहा भागता हुआ गया तो क्या देखता है कि—मोतीलाल नामके एक व्यापारीके घरमें चारों तरफसे आग लग गई है। घरमें मोतीलाल और उसके दो लडके स्त्री और एक गइया और गइयाका एक बच्चा था। मोतीलाल तो किसी प्रकार निकल आया परतु उसकी स्त्री, बच्चे, गाय और बछडा भीतर ही रह गये। उनके निकालनेका कोई उपाय नहीं था, हजारों आदमी वहापर खडे २ चिंता कर रहे थे, मोतीलाल बडे दु:खसे चिल्ला २ कर रो रहा था कि—हाय मैं मर गया, मेरी स्त्री बच्चा गइया बछडा जल गया। उसका रोना सुनकर सबही लोग उसके दु:खसे बडे दु:खित होकर आसू बहाते थे, परतु किसीकी ऐसी हिम्मत नहीं थी कि उस जलते हुए घरमें घुसकर किसी को बचाता। सुदरलाल यह बात सुनते ही, दरवाजेकी दोनों तरफ आग लग गई थी तथापि हिम्मत करके उसी वक्त घरमें घुस गया आश्चर्यके साथ सब जने उसकी हिम्मतकी तारीफ करने लगे। पहिले तो मोतीलालकी स्त्रीको कधेपर चढाकर बाहर ले आया दूसरीबार फिर घुस गया सो दोनों लडकोंको दोनो बगलमें दबाकर ले आया। तीसरी बार गया सो गइया और

पास लाया और पीछेसे धकेलकर बाहर कर दिया। आगकी लपट और गर्मीसे उसका शरीर बड़ा भारी झुलस गया था परंतु उन पांचों जीवोंको बचा लेनेसे उस पीडाको कुछ भी नहिं जाना, चित्तमें बड़ा आनंद माना, क्योंकि चारों तरफसे सब लोग धन्य धन्य कहते और उसकी प्रशंसा करते और कहते थे कि—धन्य है। इसकी माता और इसकी हिम्मतको जो आज पांच जीवोंको प्राण दान देकर बचा लिया और बडा भारी पुण्य उपार्जन किया।

तत्पश्चात् वर्द्धमानके लोगोंने एक दिन बडी भारी आमसभा करके सुंदरलालको एक मानपत्र दिया और वर्द्धमानके राजाने सुंदरलालकी इस हिम्मतसे खुश होकर एक हार इनाममें दिया। उसी दिनसे ही सब लोग सुंदरलालसे हिम्मतका पाठ सीखने लगे।

हे बालको! तुमको भी चाहिये कि निडर होकर सुंदरलालकी तरह अच्छे २ हिम्मतके (साहसके) कार्य करके अपनेको सुखी बनाओ।

उनसठवां पाठ।

विद्यार्थीभेद।

विद्याके अर्थी कहिये चाहनेवाले अथवा विद्याके पढनेवाले हों उनको विद्यार्थी कहते हैं। सो विद्यार्थी उत्तम मध्यम अधम भेदसे तीनप्रकारके होते हैं।

उत्तम विद्यार्थी—उत्तम और उपजाऊ भूमि सरीखे होते हैं उत्तम भूमिमें थोडेसे बीज डाले जाय और उनकी रक्षा भले प्रकार नहिं की जाय तौ भी बहुत सा फल होता है। उसीप्रकार उत्तम विद्यार्थीको गुरुने थोडा भी विषय समझाया हो तो वह अपने परिश्रमसे उस विषयको बहुतसा जान लेता है।

मध्यम विद्यार्थी—तोतेकी तरह होते हैं। जैसे तोतेको जितने ...गे उतने ही याद कर लेगा, उससे अधिक याद नहिं कर सका। इसीप्रकार मध्यम विद्यार्थीको गुरूजी जितना पाठ पढ़ाते हैं उतना ही पाठ याद करता है, उस विषयको न्यूनाधिक समझनेकी शक्ति नहिं रखता।

अधम विद्यार्थी—कूएमेंसे पानी निकालनेवाले फूटे वर्तनके समान होता है। जैसे फूटे वर्तनको कूएमें किसी प्रकार डबोकर भर भी लिया तो ऊपर खींचते २ सबका सब पानी निकल जाता है इसीप्रकार अधम विद्यार्थीको चाहे जितना पाठ पढाओ अथवा सुनाओ किंतु थोडे समय बाद सबको भूल जाता है।

इसी प्रकार इन्हीं तीनोंके कई भेद होते हैं। जैसे कोई विद्यार्थी चलनी सरीखे होते हैं। जिस प्रकार चलनीमेंसे अच्छा २ मैदा या आटा तो निकल जाता है और बूर (चापड) चलनी में रह जाती है इसीप्रकार चलनीके सदृश विद्यार्थीको जो जो विषय पढाओगे उनमेंसे गुणोंको छोडकर अवगुणोंको ग्रहण कर लेगा। तथा कोई कोई विद्यार्थी हंस सरीखे होते हैं। जैसे हंसके सामने पानी और दूध मिलाकर रख दो तो वह पानीको छोडकर दूधको पी जाता है। इसीप्रकार जो विद्यार्थी अपने पाठोंमेंसे अच्छी तरहकी शिक्षाओंको और गुणोंको ग्रहण कर लेता है और अवगुणोंको छोड देता है उसको हंस सरीखा उत्तम विद्यार्थी कहते हैं। तथा कोई २ विद्यार्थी लाख सदृश होते हैं जिसप्रकार लाख अग्निका संयोग मिलनेसे नर्म होकर गल जाता है और अग्निका संयोग दूर हुए बाद जैसाका तैसा कठिन हो जाता है। इसीप्रकार जो विद्यार्थी गुरुजीसे किसी हितशिक्षाको सुनकर

उस समय ही ऐसे पिघल जाते हैं कि उन शिक्षाको सर्वथा ग्रहण कर लेनेकी प्रतिज्ञा भी कर लेते हैं। परंतु गुरुजीके सामने हटते ही सब बातें भूल जाते हैं, उनको स्याम सदृश विद्यार्थी कहते हैं, इसप्रकार और भी अनेकप्रकारके विद्यार्थी होते हैं। परन्तु तुम सबको ईसके सदृश उत्तम विद्यार्थी बननेका उपाय करना चाहिये।

साठवां पाठ।

दयालु दयाराम।

धर्मका मूल दया है। दयालु मनुष्य ही अहिंसामय परमधर्मको धारण कर सकता है। प्रत्येक जीवपर दया करना जैनीका मुख्य कर्तव्य है। किसी भी जीवको किसी भी प्रकारकी तकलीफ देना व मारना नहीं, श्री अरहंत भगवानने अपने आगममें इसी अहिंसाधर्मका जगह जगह उपदेश देकर हर मनुष्यको दयालु बननेकी आज्ञा दी है।

मणिपुर नामके नगरमें एक दयाराम नामका श्रावक बड़ा भारी व्यापारी था। वह हमेशह जहाजोंके द्वारा अनेक देशोंमें अनेक तरहका माल ले जाकर बेचता व उन देशोंसे अपने देशमें आनेवाले पदार्थ ला लाकर बेचता था। दयाराममें हर एक जीव पर दया करनेका गुण ही प्रधान गुण था। किसी भी जीवको दुःखी देखता था तो उसी वक्त तन मन धनसे सहायता करके उसका दुःख दूर कर देता था। रास्तेमें किसी भी पशु पक्षी वगैरह जीवको दुःखी देखता तो उसको सार-संभाल करनेके लिये पींजरापोलमें जाकर रख देता था। सामुद्रिक व्यापारसे उसने बड़ा भारी धन कमाया था।

एकसमय किरानेका जहाज भरके एक देशमें व्यापार कर

... रास्तेमें एक नगरमें उसने जहाजको लगाया ... देखनेमें आया कि—अनेक कसाई मिलकर एक जहाज ... मेंढ बकरा वगैरह जानवर खरीदकर किसी एक देशमें ... बेचनेके लिये ले जारहे हैं, वह जहाज भी उसी पास खड़ा था। उसमेंसे जानवरोंकी चिल्लाहट सुनकर ... मनमें दया आई और जहाजसे उतरते ही कसाइयोंके जहाज ... जाकर उसके मालकोंने कहा कि—भुवो ये सब जानवर मोल ... हैं सो क्या लोगे। उन्होंने कहा कि एक लाख रुपये दो तो ... सबके सब दे सकते हैं। तब दयारामने उसी वक्त स्वीकार ... उसी नगरमें घाटा खा करके भी अपना सब माल बेचकर एक लाख रुपये लाया और उस कसाईको देकर सब जानवर ... लिये और अपने जहाजमें चढ़ाकर मणिपुर ले आया। घर पहुंचनेपर भाइ बन्धुओंने पूछा कि—अबकी बार कैसा व्यापार किया? दयारामने जवाब दिया कि "मैंने अपनी जिंदगी भरमें कभी नहीं किया ऐसा व्यापार अबकी बार किया है और बहुत ही फायदा उठाया है।" तत्पश्चात् ये पशु सार सभाल करके उनके खानेके लिये बहुत भारी रकम देकर एक जुदाही पींजरापोल खोलकर उसमें छोड़ दिये। जब घरवालोंने पूछा कि किरानेकी रकम कहा गई तो दयारामने कहा कि यह सब धन जीवदयाखाते में लगाकर शहरके बाहर एक नयी पींजरापोल खोल दी है। फिर उसका ब्योरेवार सब हाल कह कर समझा दिया कि—

दया बरोबर तप नहीं, दया बरोबर धर्म।
सबमें दया प्रधा... करहु दया शुभ कर्म॥ १॥

यह हाल ... सब जने खुश भये

दिया और नगरके राजाने दयारामको बडा भारी खिताब दिया। इसलिये तुमको भी चिवटीसे हाथी तक सब जीवोंपर दयाभाव रखकर उनको निर्भय करके अभयदान करते रहना चाहिये।

इकसठवां पाठ।

आमका सदुपयोग।

किसी गामका रहनेवाला रामरतन नामका वणिक एक वैठ में (आठवाडेके बाजारमें) गया था। आते समय वह बहुत अच्छे पके हुए ५ कलमी आम लाया। उसके हीरालाल, मोती लाल, सोहनलाल और मोहनलाल ये ४ पुत्र थे, चारोंही बाल्याव स्थामें थे। रामरतनने चारों बेटोंको बुलाकर कहा कि लो आज मैं ५ कलमी आम लाया हूं। इसमेंसे एक एक तो तुम्हारे लिये है, सो तुम लो और एक तुम्हारी माके लिये है, सो जाओ उसे दे दो। यह सुन और आम पा कर वे लडके अतिशय आनंदित हुए, क्योंकि उन्होंने ऐसे आम कभी नहीं देखे थे।

फिर सन्ध्याको सोनेके समय पिताने अपने चारों लडकोंसे पूछा कि क्यों रे छोकरो! वे आम कैसे थे? तुमको कैसे मीठे लगे उनमेंसे बडा लडका हीरालाल बोला कि पिताजी! वह आम बहुत अच्छा था, उसका रस कितना मीठा था सो मैं नहिं कह सका! उस आमको मैंने सर्वोत्तम समझ उसकी गुठली यत्नके साथ रख दी है। अब बोनेके दिन आयगे तो उसको अपनी बगियामें बो दूंगा। जब पेड बडा हो जायगा तो उससे बहुत आम मिलेंगे। यह सुन पिताजीने कहा कि साबास बेटे सा बास! तू बडा विवेकी है, भविष्यके कर्तव्य करनेमें पहिलेसे ही सावधान होनेवाला तू ही है। जो अच्छे किसान होते हैं, वे अ

के उसके लिये अच्छे २ चीज पहिलेसे रख छोडते हैं। तत्प श्च सबसे छोटे मोहनलाल लडकेने कहा कि पिताजी मैंने ना आम उसी वक्त खा लिया और उसकी गुठली फेंक दी। के सिवाय अम्माने भी मुझे अपने आममेंसे आधा हिस्सा या था, वह भी खा लिया, उसके मीठेपनकी तारीफ कहातक रूं ? मुहमें रखते ही मक्खनकी माफक पिघल जाता था। ताने कहा कि तूने होशियारीका काम नहिं किया, तू छोटा है, सकारण यह काम तुझसे हुआ, जब तू बडा हो जायगा तो झे भला बुरेका विचार होगा।

फिर तीसरा लडका मोतीलाल बोला कि पिताजी मैंने जो म किया वह विचारके बहुत अच्छा किया मोहनने जो गुठली क दी थी, वह मैंने आगमें सेककर खाई सो बहुत मीठी नि ली, उसके खानेसे बडा आनन्द हुआ और मेरी बारमें जो आम माता था वह मैंने बाजारमें बेच दिया उसके मुझे इतने पैसे मिले कि बाजारमें उसके ४ ५ आम मिलेंगे। यह सुन पिताने मुह बिगाड कर कहा कि—तूने विचार करके तो काम किया परंतु मुझे अच्छा नहिं लगा क्योंकि यह काम कृपणताका है यद्यपि लडकों को विचारके काम करना चाहिए, परतु इस प्रकारका विचार ठीक नहीं यदि तू हीरालालके माफक करता तो अच्छा था।

चौथा लडका सोहनलाल जो कि हीरालाल मोतीलालसे छोटा था और मोहनसे बडा था, वह चुपचाप खडा था, उसने कुछ भी नहिं कहा था पिताने उसकी ओर दृष्टि करके पूछा कि सोहन! तूने अपने आमका क्या उपयोग किया? सोहनने हाथ जोडकर विनयके साथ कहा कि पिताजी! अपने पडोसीके यहा

जो एक नौकरणी रहती है उसके बेटे महादेवाको आज १५ दिनसे बुखार आता है। बुखारके मारे उसकी देही धागसी ज-रही है, घडी घडीमें उसको प्यास लगती है और पानी भी थोड़ा थोडा पिलाते हैं, मगर उसकी प्यास नहिं बुझती, मैंने विचा-रिया कि महादेवा यह आम खा लेगा तो उसकी थोडी बहुत प्यास मिट जायगी, ऐसा समझ मैंने यह आम उसको लेजाकर दिया और खानेको कहा, मगर उसने किसी प्रकार भी लेना मंजूर नहिं किया, तब मैं उसके बिछौने पर आम रखके चला आया। इस बातके सुनते ही पिताके आनन्दाश्रु भर आए और मा-स्टरफौस बोला कि अच्छा तुम ही बताओ कि तुम चारोंमेंसे यह आम किसने अच्छे काममें लगाया? यह सुनकर सोहन तो चुप रहा परंतु दोषके तीनों भाई एकदमसे कह उठे कि "सोहनने, सोहनने" सोहन तो चुप था, उसकी माने बड़े प्यारके साथ चुम्मा लेकर छातीसे लगा लिया, माताको उस समय बहुत ही आनन्द हुआ, आनन्दके मारे उसकी आखोंमें आसू आगये, उसे देखकर सोहनलालको जो आनन्द हुआ, वह आनंद यदि ऐसे २ बीस आम उसको मिलते तो भी नहिं होता।

इस कहानी परसे यह शिक्षा लेना चाहिये कि परोपकारमें तन मन धन लगानेसे जो सुख प्राप्त होता है, वह किसी अन्य कार्यसे नहिं होता।

बासठवा पाठ।

गढा खोदे सो पडे।

किसी शहरमें एक ब्राह्मण राजाके कानमें जाकर कोइ मन्त्र व आशीर्वाद कहा करता था। उसको देख राजाने नाईसे

नहिं गया। एक दिन नाईने उस ब्राह्मणको कहा कि आप
कानमें प्रतिदिन मुंह लगाके कुछ कहा करते हैं, सो
महाराजको अच्छा नहिं लगता क्योंकि तुम्हारे श्वासमें दुर्गंध
(बदबू) आती है। इसकारण महाराजके कान और अपने मुंह
के बीचमें कपडा रखकर कहा करो तो अच्छा है। ब्राह्मणने इस
बातको सच मानकर कहा कि कलसे ऐसा ही काम करूंगा।
फिर उस नाईने राजाके पास आकर यह कहा कि महाराज!
अमुक ब्राह्मण प्रतिदिन आकर आपके कानमें कुछ कहा करता
है, सो उसने कई जनोंके सामने मुझसे यों कहा कि—महाराजके
कानमें बड़ा दुर्गंध आती हैं, सो अबसे मैं कानके बीचमें कपडा
लगाकर कहा करूंगा। तत्पश्चात् दूसरे दिन ब्राह्मणने कान और
मुंहके बीचमें कपडा लगाकर मन्त्र व आशीर्वाद पढा, तो राजाको
नाईका कहना यथार्थ मालूम पडा। दैवयोगसे ब्राह्मणने उसी दिन
महाराज से प्रार्थनाकी कि महाराज! मुझे आपकी सेवामें हाजिर
होते बहुत दिन हो गये, सो अब कृपादृष्टि होनी चाहिये। राजा
साहबने कहा कि "अच्छा! कल तुमको चिट्ठी मिलेगी" इस
बातके सुननेसे उस हज्जामको निश्चय हुआ कि—महाराजकी
ब्राह्मणपर बडी प्रीति है, मेरे कहनेका कुछ भी असर नहिं हुआ
इसकारण इसको कल दक्षिणाकी चिट्ठी मिलेगी, सो ब्राह्मण
देवतासे कुछ झपटना चाहिये। यह विचारकर वह नाई ब्राह्मण
देवताके घर पर पहुंचा और कहने लगा कि महाराज, मैंने कैसी
[illegible]? इसीकारण महाराज आपपर
[illegible] मिलेगी और फिर महीनेकी
प्रथम चिट्ठी मेरी

देवताने भी इसे स्वीकार कर लिया। दूसरे दिन राजासाहबने उस ब्राह्मणको एक बंद चिट्ठी दी। (जिसमें यह लिखा था कि इस चिट्ठी लानेवालेका मुंह काला करके गधेपर चढ़ाकर सारे शहरमें फिराना) और कहा कि यह चिट्ठी कोतवालसाहबको देना, ब्राह्मणने वह चिट्ठी प्रतिज्ञानुसार नाईको दे दी और उस नाईने कोतवाल साहबको दे दी, सो कोतवाल साहबने उस चिट्ठीकी तामील नाईपर कर दिखाई। नाई यह दुर्दशा भोगकर मन ही मन कहने लगा कि "गढा खोदे सो ही पड़े" यह कहावत वास्तवमें सत्य है। आइंदेको प्रतिज्ञा कर ली कि फिर मैं ऐसा काम कदापि नहिं करूंगा।

इस कथानकसे यह शिक्षा लेना चाहिये कि किसीका बुरा चिंतना अच्छा नहीं, जो किसी दूसरेका बुरा चिंतवन करेगा, उसको उक्त नाईकी तरह दुःख उठाना पड़ेगा। इस जगह कबीरदासजीका वचन स्मरण होता है कि,—

जो तोकू कांटा बुवे, ताहि बोहि तू फूल।
तोहि फूलका फूल है, वाको है तिरशूल ॥ १ ॥

तिरेसठवां पाठ।

मोतीकी उत्पत्ति।

प्राचीन कालमें मोती हस्तीके मस्तकमेंसे भी निकलते थे,
जिनको कि गजमोती कहते हैं। परन्तु आजकल न
रहे और न वे मोती ही रहे। वर्तमान समयमें जो मु
में आते हैं, वे एक प्रकारकी मछलियोंकी सीपमें
उनको सच्चे मोती कहते हैं। और जो
बनाये जाते हैं, वे सब झूठे

होते हैं। जिन सीपोंमें मोती होते हैं वे सीपें मच्छियोंके शरीरमें बदामकी माफिक दो भाग चिपकी हुई हड्डी होती हैं और ये मच्छियें (सीपें) समुद्रोंके किनारों पर कई देशोंमें मिलती हैं जिनको कस्तूरामच्छो कहते हैं। हिंदोस्थानमें मोती मिलनेका सबसे प्रसिद्ध ठिकाना लंका देशका पश्चिम किनारा है। यहांपर अपरेल और मई महीनोंमें उन मच्छियोंका अहेर (शिकार) होता हैं।

मोती एक गोल गोल दाना होता है जो कि सफेद व सुनहरा तथा गुलाबी रंगका भी होता है। प्राचीन विद्वानोंका मत है कि आश्विन मासमें सोपवाली मच्छियें समुद्रपर तैर आती हैं, और स्वाति नक्षत्रके दिन जिन जिन मच्छियोंकी सीप (पेट) में मेहकी बूंद पड जाती है वही जमकर मोती हो जाती हैं परन्तु आधुनिक विद्वान् कहते हैं कि मच्छियोंको एक प्रकारके रोगके होनेसे मोती उत्पन्न होते हैं। लंकामें मोती कदावी नमक समुद्र की खाडीमें बहुत मिलते हैं, इस खाडीके किनारों पर मीनार द्वीप आरेवो कुदावी और पपोरियो नामके नगर हैं, समुद्रके जिस हिस्सेमें सीपियां निकलती हैं वह किनारेसे १० कोशकी दूरी पर है, और वहां पर प्राय ४० ५० फुट पानी रहता है, यह स्थान अंगरेज सरकारके अधिकारमें है, अंगरेज सरकार मोती निकालने वालेको नियत समयपर ठेका दे देती है, कभी कभी ऐसा भी होता है कि सरकारकी तरफसे भी मोती निकाले जाते हैं।

जिस स्थानमें सीपियां पाइ जाती हैं उसके ४ या ५ विभाग कर दिये जाते हैं और प्रत्येक भागमें वारी वारी (वारो वारी) से सीपियोंका अहेर होता है, प्रति वर्ष हरएक भागमें अहेर नहिं होता, क्योंकि कस्तुरा

लिये कमसे कम ७ वर्षके समयकी आवश्यकता है, जब सीपियोंका अहेर होता है, तब समुद्रके किनारे पर ठेकेदार व्यापारी मजदूर आदि लाखों मनुष्योंकी भीड़ हो जाती है, यह अहेर प्राय डेढ महीने तक होता है। ठेकेदारोंकी अनेक नौकायें होती हैं। हरएक नौकापर दश दश डुब्बे (जो कि पानीमें डूबकर बहुत देर तक दम साधे रहैं) रहते हैं, सो एक साथ पांच डुब्बे गोते मारते हैं, डोंगियो (नौकाओं) से बड़े २ पत्थर लटकाते हैं, उनके साथ ही वे डुब्बे जमीन पर (जहां कि सीपियें जमानसे चिपकी हुई रहती हैं) पहुंच जाते हैं। हरएक पत्थरके साथ एक एक टोकरी बंधी रहती है सो वे डुब्बे सीपियोंको छुरीसे छुड़ा छुड़ा कर १॥ मिनिटमें टोकरी भर देते हैं, दो मिनटके पूरे होते होते डोंगीवाले उनको खींच लेते हैं, फिर दूसरे पांच डुब्बे डुबकी लगाते हैं, इसीप्रकार हरएक आदमी बारी बारी ४० बार डुबकी मारता है। डुबकीके बाद सीपियोंसे भरी हुई नाव लेकर किनारे पर आ जाते हैं, और किनारे पर उन सीपियोंका ढेर लगा देते हैं, फिर उनको सड़ाते हैं जिनकी दुर्गंध ऐसी तेज होती है कि मनुष्य सह नहिं सका, परंतु मजदूर लोग पेटके लिये सब सह लेते हैं, फिर उनको बड़े बड़े लकड़ेके पीपोंमें व नांदोंमें भर कर धोते हैं जिससे सीपें अपने आप अलग हो जाती हैं, और मोती अलग हो जाते हैं। मोती तथा सीप महीन चलनीसे छानकर मथ जानेके मोती निकाल लेते हैं। मोती बड़ी चलनीमें रहते हैं, वेडी जानके होते हैं उससे छोटे छिद्रवाली चलनीमें रह जाते हैं, वे मझोले मोती होते हैं, और तीसरी चलनीमें हैं वे सबसे छोटे हैं, सरकारको कई लाख रुपये मोतियोंके ठेकेसे मिलते

हैं। हिंदुस्थानी लोग पीले रंगके मोतीको पसंद करते हैं। मगर अंगरेज लोग सफेद रंगके मोतियोंको अधिक चाहते हैं। जिन सीपोंमेंसे मोती निकाल्ते हैं वे भी मोतीका तरह चमकती हैं। चीन और जापानके कारीगर सीपोंके मोती बटन वगैरह बहुत चीजें बनाते हैं। बंगाल देशमें सीपका चूना भी बनता और पानके साथ खाया जाता है।

चौसठवां पाठ।

गुरु शिष्य प्रश्नोत्तर।

शिष्य—महाराज! वास्तवमें पंडित कौन है?

गुरु—जो विवेकी हो अर्थात् विचार पूर्वक स्वयं सुमार्गमें चले और दूसरोंको भी सुमार्गमें चलावे।

शिष्य—मूर्ख कौन है?

गुरु-विषयी लोग, जोकि पंचेंद्रियके विषयोंमें सुख ढूंढते हैं।

शिष्य—सुभट (शूरवीर) कौन है?

गुरु—जिन्होंने विषयकषाय जीत लिये हों।

शिष्य—कायर कौन है?

गुरु—जो इंद्रियोंको वश नहिं कर सकते।

शिष्य—किस मनुष्यका जन्म सफल है?

गुरु-जो धर्म अर्थ काम और मोक्ष ये चार पुरुषार्थ साधता है।

शिष्य—जगतमें धन्य कौन है?

गुरु-परोपकारी और सम्यग्दृष्टि।

शिष्य—सर्वथा धिक्कारने योग्य कौन है?

गुरु—जो किसी बातकी प्रतिज्ञा करके भगकर दे।

शिष्य—मित्र कौन है?

गुरु—जो हितवांछक हो अर्थात् जो पाप या प्रमादसे निवारण करके परमार्थमें लगावे।

शिष्य—जीवोंका शत्रु कौन है?

गुरु-क्रोध मान माया लोभ और अनुद्योग (उद्यम नहिं करना)

शिष्य—मलीन कौन है?

गुरु-महापापी जोकि महामिथ्यात्व और पाचों पापोंमें लिप्त हो।

शिष्य—सदा पवित्र कौन है?

गुरु—बालब्रह्मचारी जिसका कि मन शुद्ध हो।

शिष्य—मनुष्य होते भी पशु समान कौन है?

गुरु—जिनके मनमें हिताहितका विचार नहीं।

शिष्य—अंधा कौन है?

गुरु-जो कुगुरु कुदेव और कुशास्त्रको नहिं जनता और कुकार्यमें रत (लवलीन) हो।

शिष्य—बहिरा कौन है?

गुरु—जो हितकी बात नहिं सुने अर्थात् सच्चे गुरुका उपदेश और सच्चे शास्त्रको नहिं सुनता।

शिष्य—मूक (गूंगा) कौन है?

गुरु—जो समयपर हित मित सत्य और प्रिय वचन नहिं कहे

शिष्य-पशु कौन है?

गुरु-जिसने तीर्थयात्रा नहिं की हो।

शिष्य-टोंटा (हाथरहित) कौन है?

गुरु—जिसने औषधदान शास्त्रदान अभयदान और आहारदानमेंसे एक भी दान नहिं किया हो।

शिष्य—अलंकार कौन है?

गुरु-शील (ब्रह्मचर्य) और विद्या।

शिष्य–इस दु खमयी ससारमें जीवोंको शरण कौन है ?
गुरु–सचादेव और सचाशास्त्र और सचागुरु।
शिष्य–जल्दी क्या करना चाहिए ?
गुरु–ससारसे छूटने मुक्ति या पानेका उपाय।
शिष्य–मुक्तिका उपाय क्या है ?
गुरु—चारित्र सहित सम्यग्ज्ञान।
शिष्य–नित्य क्या विचारना चाहिये ?
गुरु–ससारकी अनित्यादि अवस्थायें।
शिष्य–जीता भी मरा हुआ कौन है ?
गुरु–मूर्ख तथा जिसका शरीर कभी परोपकारमें नहिं लगा।
शिष्य–रोगीका मित्र कौन है ?
गुरु–औषध और पथ्यसेवन।
शिष्य–मरे पीछे सहायता करनेवाला कौन है ?
गुरु–इस जन्ममें उपार्जन किया हुआ धर्म या पुण्य।
शिष्य–सबसे उत्तम धन कौनसा है ?
गुरु–विद्या।
शिष्य–गुरु कौन है ?
गुरु–जो ज्ञानी होकर प्राणीमात्रके हितमें सदा तत्पर हो।
शिष्य–उपादेय (ग्रहण करने योग्य) धर्म क्या है ?
गुरु–धर्मगुरुके वचन।
शिष्य–हेय (त्यागने योग्य) क्या है ?
गुरु–अधर्म अर्थात् मिथ्यात्व और पाच पाप।
शिष्य–विष क्या है ?
गुरु–कुदेव कुगुरु और कुशास्त्रकी भक्ति करना।

शिष्य-इस संसारमें सार क्या है?

गुरु-मनुष्य जन्म पाकर तत्त्वदर्शी विद्वान् होकर निज परके हितमें उद्यत (तत्पर) रहना।

शिष्य-मदिराकी तरह मोहित करनेवाला कौन है?

गुरु-विषयोंमें ममता।

शिष्य-डाकू (लुटेरे) कौन हैं?

गुरु-इन्द्रियोंके विषय।

शिष्य-संसारको बढानेवाली बेल कौन है?

गुरु-तृष्णा (भोगोंकी आशा)।

शिष्य-इस संसारमें भय किसका है।

गुरु-मरनेका।

शिष्य-आंखसे भी अन्धा कौन है?

गुरु-रागी।

शिष्य-बडप्पनका मूल क्या है?

गुरु-कभी कोई याचना नहिं करना।

शिष्य-गहन (जिसको कोईभी नहिं जान सकता ऐसा) क्या है?

गुरु-स्त्रियोंका चरित्र।

शिष्य-चतुर कौन है?

गुरु-जो स्त्रीके जालमें न फ[illegible]।

शिष्य-दरिद्रता क्या है?

गुरु-असंतोष।

शिष्य-लघुता क्या है?

गुरु-याचना करना।

शिष्य-मूर्खता क्या है?

गुरु-चतुर होनेपर भी ज्ञानाभ्यास नहिं करना।

शिष्य–सदा कौन जागता है ?
गुरु–विवेकी ।
शिष्य–निद्रा क्या है ?
गुरु–मनुष्यकी मूर्खता ।
शिष्य–कमलपत्र पर पडे हुये जलबिंदु समान तरल क्या है ?
गुरु–जवानी, धन, और आयु ।
शिष्य–नरक क्या है ?
गुरु–पराधीनता ।
शिष्य–प्रिय क्या है ?
गुरु–जीवोंको अपने प्राण ।
शिष्य–उत्तम दान क्या है ?
गुरु–निःस्वार्थ होकर दान करना ।
शिष्य–वचनोंकी शोभा क्या है ?
गुरु–सत्य बोलना ।
शिष्य–मृत्यु क्या है ।
गुरु–मूर्खता ।
शिष्य–अमूल्य क्या है ?
गुरु–समयपर दिया हुआ दान ।
शिष्य–मरणपर्यंत शल्य [दुखदायक कांटा] क्या है ?
गुरु–गुप्तभावसे किया हुआ कुकार्य ।
शिष्य–यत्न कहां करना चाहिये ?
गुरु–विद्या पढनेमें और उत्तम औषधिके दान करनेमें ।
शिष्य–सदा विरागता कहां रखना ?
गुरु–परधन, परस्त्री, और दुर्जनमें ।

शिष्य–कंठगत प्राण होतेभी किसका विश्वास नहिं करना।
गुरु–मूर्ख, मानी, कृतघ्नी और विषयलंपटका।
शिष्य–पूज्य कौन है?
गुरु–सदाचारी।
शिष्य–जगतको किसने जीता?
गुरु–सच्चे शांतस्वभावीने।
शिष्य–देवता भी जिसे नमस्कार करें ऐसा कौन है?
गुरु–जो दया करनेमें प्रधान पुरुष हो।
शिष्य–सब जने किसके वशमें हो जाते हैं?
गुरु–हित मित सत्यभाषी और विनयीके।
शिष्य–बिजलीके समान चंचल क्या है?
गुरु–दुर्जनकी संगति और स्त्रियोंका प्रेम
शिष्य निंदनीय क्या है?
गुरु–कृपणता।
शिष्य–प्रशंसनीय क्या है?
गुरु–उदारता (दानशीलता)
शिष्य–चिंतामणिरत्नके समान दुर्लभ क्या है?

गुरु–चार बातें–१ प्रिय वचन सहित दान देना, २ गर्वरहित ज्ञान, ३ क्षमासहित शूरता और ४ त्यागसहित धन।

शिष्य–आश्चर्य क्या है?

गुरु–यह मनुष्य सबको मरते हुए देखता है, और अपनेको अमर मानकर कुछ भी अपना कल्याण नहिं करता।

द्वितीय भाग समाप्त

जैन-पाठशालाओंमें पढाने योग्य पुस्तकें

श्री नेमीचन्द बाकलीवाल मालिक जैनमित्रमंडली द्वारा प्रकाशित
ये पुस्तकें भी संस्थामें मिलती हैं।

निम्न लिखित सभी पुस्तकोंके लेखक
स्वनामधन्य श्रीमान् पं पन्नालालजी बाकलीवाल हैं।

१।	मौखिक वर्ण परिचय	)॥
२।	जैनबालबोधक प्रथमभाग, संशोधित वर्द्धित पृष्ठ ८४	।-)
३।	जैनबालबोधक दूसरा भाग पृष्ठ ११६	॥)
४।	जैनबालबोधक तृतीय भाग २४० पृष्ठ जिल्दसहित	१)
५।	जैनबालबोधक चतुर्थभाग पृष्ठ ३६४	१।)
६।	जैनस्त्रीशिक्षा प्रथमभाग नवीन छपी	-)
७।	जैनस्त्रीशिक्षा द्वितीय भाग	=)
८।	जैनधर्मशिक्षक (बालबोध जैनधर्म) प्रथम भाग	-)
९।	जैनधर्मशिक्षक (बालबोध जैनधर्म) दूसरा भाग	-)॥
१०।	जैनधर्मशिक्षक (बालबोध जैनधर्म) तृतीय भाग	=)
११।	द्रव्यसंग्रह (नवीन छपा हुआ)	।)
१२।	बालपद्मपुराण (पद्मपुराणका सार) बालकोंकेलिये	।)
१३।	ब्रह्मविलास भैया भगवतीदासजीकृत जिल्द फिरसे छपा	२)

न्यायदीपिका मूल

संस्थाने फिरसे छपाया है, छात्रोंको मगानेमें विलम्ब नहीं करना चाहिये, मूल्य दो आना मात्र।

पत्र व्यवहार करनेका पता—

मैनेजर–भारतीय जैनसिद्धांत प्रकाशिनी संस्था

९ विश्वकोषलेन, पोष्ट बाघबाजार कलकत्ता।

शिष्य—कंठगत प्राण होतेभी किसका विश्वास नहिं करना।

गुरु—मूर्ख, माता, कृतघ्नी और विषयलम्पटका।

शिष्य—पूज्य कौन है?

गुरु—सदाचारी।

शिष्य—जगतको किसने जीता?

गुरु—सच्चे शांतस्वभावीने।

शिष्य—देवता भी जिसे नमस्कार करें ऐसा कौन है?

गुरु—जो दया करनेमें प्रधान पुरुष हो।

शिष्य—सब जने किसके वशमें हो जाते हैं?

गुरु—हित मित सत्यभाषी और विनयीके।

शिष्य—बिजलीके समान चचल क्या है?

गुरु—दुर्जनकी संगति और स्त्रियोंका प्रेम

शिष्य निंदनीय क्या है?

गुरु—कृपणता।

शिष्य—प्रशंसनीय क्या है?

गुरु—उदारता (दानशीलता)

शिष्य—चिंतामणिरत्नके समान दुर्लभ क्या है?

गुरु—चार बातें—१ प्रिय वचन सहित दान देना, २ गर्वरहित ज्ञान, ३ क्षमासहित शूरता और ४ त्यागसहित धन।

शिष्य—आश्चर्य क्या है?

गुरु—यह मनुष्य सबको मरते हुए देखता है, और अपनेको अमर मानकर कुछ भी अपना कल्याण नहिं करता।

द्वितीय भाग समाप्त